वर्ष ३ अंक ३३
संवत् २०७७ ज्येष्ठ
जुलाई २०२१

आर्ष क्रान्ति

वैदिक समाज व्यवस्था के लिए समर्पित

जुलाई माह की महत्वपूर्ण तिथियां। जुलाई मास में अनेक ऐसी महान् विभूतियों ने जन्म लिया, अनेक महापुरुषों का तिरोधान हुआ। उनके महान कार्यों और उनके विचारों से प्रेरणा लेकर हम जीवन और समाज को उन्नति के मार्ग पर ले जा सकते हैं । वे कौन सी तिथियां हैं जो हम सभी के लिए महत्वपूर्ण हैं, आइए

1 जुलाई चिकित्सा दिवस, डॉ बिधान चंद्र राय जयंती, अंतर्राष्ट्रीय चुटकुला दिवस, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन स्मृति दिवस।
2 जुलाई अंतरराष्ट्रीय खेल पत्रकार दिवस ।
3 जुलाई श्री सनातन गोस्वामी तिरोभाव दिवस।
4 स्वामी विवेकानंद स्मृति दिवस, अमेरिकी स्वतंत्रता दिवस।
6 जुलाई श्यामा प्रसाद मुखर्जी जयंती और विश्व जूनोसिस दिवस।
7 जुलाई राष्ट्रीय विद्यार्थी दिवस।
9 जुलाई गुरु पूर्णिमा, निर्माता निर्देशक गुरुदत्त जन्मदिवस।
10 जुलाई स्वतंत्रता सेनानी और असम के प्रथम मुख्यमंत्री गोपीनाथ बोर्दोलोई जयंती।
11 जुलाई विश्व जनसंख्या दिवस ।
12 जुलाई राष्ट्रीय सादगी दिवस।
13 जुलाई शहीद दिवस कारगिल।
14 जुलाई वायु परीक्षा दिवस।
15 जुलाई साझा सेवा केंद्र दिवस, विश्व युवा कौशल दिवस।
16 जुलाई आइसक्रीम डे ।
17 जुलाई अंतरराष्ट्रीय न्याय के लिए विश्व दिवस।
18 जुलाई अंतरराष्ट्रीय नेल्सन मंडेला जयंती दिवस।
19 जुलाई प्रथम भारतीय स्वतन्त्रता सेनानी मंगल पांडे जन्मदिवस।
20 जुलाई बुटकेश्वर दत्त पुण्यतिथि।
22 जुलाई राष्ट्रीय झंडा अंगीकरण दिवस, महागायक मुकेश का जन्म दिवस।
23 जुलाई राष्ट्रीय प्रसारण दिवस, चंद्रशेखर आजाद जयंती, कैप्टन लक्ष्मी सहगल पुण्यतिथि।
25 जुलाई गोस्वामी तुलसीदास जयंती।
26 जुलाई विजय दिवस।
27 जुलाई डॉक्टर एपीजे अब्दुल कलाम स्मृति दिवस।
28 जुलाई विश्व प्रकृति संरक्षण, अभिभावक दिवस।
29 जुलाई बाघ दिवस।
31 जुलाई मुंशी प्रेमचंद जयंती

आर्य लेखक परिषद्

ओ३म्

आर्य लेखक परिषद् का मुख पत्र

आर्ष क्रान्ति

जुलाई २०२१

वर्ष–३ अंक–३३,
विक्रम संवत् २०७८
दयानन्दाब्द– १९७
कलि संवत् – ५१२३
सृष्टि संवत –१,९६,०८,५३,१२२

प्रधान सम्पादक
वेदप्रिय शास्त्री
(७६६५७६५११३)

❖

सम्पादक
अखिलेश आर्येन्दु
(८१७८७१०३३४)

❖

सह सम्पादक
प्रांशु आर्य (कोटा)
(८७३६६७६६३०,
९९६३६७०९४०)

❖

आकल्पन
प्रवीण कुमार (महाराष्ट्र)

❖

सम्पादकीय कार्यालय
महर्षि दयानन्द आश्रम
ग्राम सिताबाडी, केलवाड़ा
जिला–बारां (राजस्थान)–३२५२१६

अनुक्रम

विषय

१. आर्ष क्रान्ति (सम्पादकीय)
२. दुख–सुख : वास्तविक कारण और आधुनिक प्रगति
३. गुरु गुरु होता है (कविता)
४. Fourth Ashrama : Samnyasa
५. शिशु जन्म को निरापद बनाता है जातकर्म संस्कार
६. वेद – महिमा (कविता)
७. पुराण किसने बनाये ?
८. चेतना–विज्ञान और आत्म–विज्ञान...
९. स्वयं को खोजता हुआ आधुनिक मानव
१०. शोषण और क्रूरता से मुक्ति कब तक ?
११. चमत्कारी पौधे सहजन से जुड़े हैं कई चमत्कार
१२. मन का उपचार
१३. भाव ही नहीं, भंगिमा भी पहिचानिए

ईमेल – aryalekhakparishad@gmail.com
वेबसाइट – https://aryalekhakparishad.com/
फेसबुक – आर्य लेखक परिषद्

Digital

सम्पादकीय

आर्ष क्रान्ति

आर्ष का अर्थ है ऋषि प्रणीत अर्थात् ऋषियों द्वारा निर्देशित। क्रान्ति का अर्थ है गतिविधि, चाल–चलन। ऋषि कहते हैं जिनमें ज्ञान को साक्षात् करने की क्षमता होती है और जो स्वार्थरहितपरार्थघटकमात्र होते हैं। सृष्टि का आदिकाल आर्ष काल होता है। बुद्धियाँ पवित्र और तीक्ष्ण होती हैं। तत्कालीन ऋषि लोग परमात्मा के सान्निध्य में बैठ कर मानवों के लिए आवश्यक ज्ञान का साक्षात्कार करने की योग्यता वाले होते थे। सृष्टि के नियमानुसार आदिकाल में परमेश्वर इन्हीं ऋषियों की बुद्धि में सर्वप्रथम भाषा और ज्ञान का प्रकाश करता है। वैदिक लोग उसे वेद कहते हैं। ऋषियों ने वेद वर्णित आचार, व्यवहार, आहार विहार और रहन–सहन का ढंग खोज कर मानवों में प्रचलित किया। लोगों के स्वस्थ, सुखी और भयमुक्त रहने का कल्याणकारी जीवन दर्शन प्रस्तुत किया। एक स्वस्थ समाज और राष्ट्र बनाया। शत्रुओं से उसकी रक्षा के उपाय बताए। जब तक संसार के लोग इस ईश्वरीय जीवन दर्शन के अनुसार चलते रहे तब तक खूब सुखी रहे, सब के योगक्षेम, भोग और मोक्ष सरलता से सिद्ध होते रहे।

कालान्तर में शनैः–शनैः, संसार के लोगों में स्वार्थ, विलासिता, आलस्य, प्रमाद और बुद्धि मालिन्य बढ़ने लगा। ईश्वर प्रदत्त व्यवस्था को भंग करके मानवी दुर्बलताओं के आधार पर अनेक वाद खड़े कर लिए गए। बड़े–बड़े समाज टूट कर अनेक वर्गों और उपवर्गों में बंट गए। लोग कबीले बना कर परस्पर लड़ने और लूटपाट करने लगे। बलवान् और धनवान् लोग निर्बलों का स्वत्वहरण करने लगे। इस तरह दास प्रथा ने जन्म लिया। सभी वर्ग परस्पर शत्रु बन गए। आक्रमण, युद्ध, हत्या, मार–काट, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, ऊंच–नीच, छूतछात का बोल बाला हो गया। वह आज तक चल रहा है।

यह आर्यावर्त्त देश भी अखण्ड से खण्ड–खण्ड होकर छोटे–छोटे माण्डलिक राज्यों में विभक्त हो गया। सभी राजे परस्पर शत्रु बन कर लड़ने लगे और एक दूसरे का राज्य छीनने लगे। आपसी फूट और कलह के कारण बाहरी विदेशियों को अवसर मिल गया और उनके द्वारा लूट–पाट, मार–काट प्रारम्भ हो गई। कुछ समय बाद वे स्वयं राजा बन कर शासन करने लगे और यह विशाल देश गुलाम हो गया। यवन, शक, हूण, मंगोल, मुस्लिम और ईसाई सबने इसे लूटा और गुलाम बना कर रखा। एक वास्तविक ईश्वर, उसकी एक व्यवस्था और एक धर्म के स्थान पर अनेक ईश्वर, मत मजहब, कर्मकाण्ड प्रचलित कर दिए गए जिनका मुख्य उद्देश्य पराया माल हड़पना ही था।

ईसा की उन्नीसवीं शताब्दी में जब भारत अंग्रेजों का गुलाम था, एक महापुरुष ने जन्म लिया। इनका नाम था ***स्वामी दयानन्द सरस्वती।***

इन्होंने संसार की दुर्दशा को देखा और उसके कारण की खोज की। उन्होंने बताया कि वास्तविक ईश्वर, वास्तविक धर्म और वास्तविक व्यवस्था का परित्याग कर देने के कारण ही संसार की वर्तमान दुर्दशा हो रही है। इस पीड़ित, पराधीन मानवता की मुक्ति तभी होगी जब वह पुनः लौट कर ईश्वरीय व्यवस्था को अपनाएगी। उस व्यवस्था का नाम है वर्णाश्रम व्यवस्था। स्वामी दयानन्द का दावा है कि यही वह व्यवस्था है जिसके आधार पर एक स्वस्थ समाज का निर्माण किया जा सकता है और ऐसा समाज ही वास्तविक समाज होगा जो सामाजिकता का फल प्रदान करेगा। इसके लिए सबको ऋषियों के ग्रन्थों का स्वाध्याय करके तदनुसार कार्य करना होगा।

स्वामी दयानन्द ने इसी आर्ष वैचारिक क्रान्ति का उद्घोष किया और उसी को प्रतिष्ठित, प्रचारित और प्रसारित करने के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। उसे व्यावहारिक धरातल पर आकार प्रदान करने के लिए आर्यसमाज की स्थापना की। किन्तु खेद है कि आर्यसमाज वह सब नहीं कर सका।

वह निज अस्तित्व की समाप्ति की ओर तेजी से बढ़ रहा है। आज स्वामी दयानन्द को योजना बद्ध तरीके से तिरोहित किया जा रहा है और उनके उपकार को नकारा जा रहा है। कौम में उपेक्षित करने की नीयत से उन्हें बदनाम करने का प्रयत्न हो रहा है।

वर्तमान संसार वैचारिक दृष्टि से इतना बौना और चारित्रिक दृष्टि से इतना ओछा हो चुका है कि वह

चाहकर भी दयानन्द की विशालता और उच्चता का स्पर्श नहीं कर पा रहा। परन्तु दयानन्द आज भी प्रासंगिक है, व्यावहारिक है। उसकी उपेक्षा से संसार का अहित ही होगा। स्वामी दयानन्द की पहचान पाखण्ड का खण्डन करने वाले के रूप में प्रसिद्ध है। उन्होंने अपने कार्य का प्रारम्भ ही हरिद्वार के कुम्भ मेले पर पाखण्ड खण्डिनी पताका फहरा कर किया था। वे पाखण्ड को हटाकर विश्व स्तर पर एक स्वस्थ समाज की स्थापना करना चाहते थे। इस लिए उन्होंने स्वयं के द्वारा स्थापित आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य संसार का उपकार करना लिखा था। स्वामी दयानन्द गत पांच हजार वर्षों के पश्चात् होने वाला एक मात्र महापुरुष है जो अद्वितीय और अनुपम है। मानवता का इतना महान् हितचिन्तक और रक्षक ढूंढने पर भी नहीं मिलेगा। उसने एक स्वस्थ विश्व समाज की स्थापना की प्रक्रिया और योजना संसार के समक्ष प्रस्तुत की थी वैसी आज तक किसी ने नहीं की। परन्तु संसार मतान्ध होने के कारण उसे स्वीकार नहीं कर सका।

वास्तव में झूठा, चरित्रहीन, असंयमी, कामचोर, मुफ्तखोर, अन्यायप्रिय, अत्याचारी, दुर्व्यसनी और मांसाहारी मनुष्य कभी भी स्वामी दयानन्द को पसन्द नहीं कर सकता और न उसका अनुयायी हो सकता है। जो लोग स्वामी दयानन्द की उपेक्षा अथवा उनका विरोध करते हैं उन पर दृष्टिपात करने पर ऊपर लिखे दोषों में से कोई एक अवश्य मिलेगा। उक्त दोषों से युक्त मनुष्य नाम मात्र के मनुष्य होते हैं, मानवता और समाज के घोर शत्रु होते हैं। ये लोग दोहरे चरित्र वाले होते हैं, भले होने का दिखावा करते हैं और आन्तरिक रूप से शोषण, प्रताड़न और परस्वहरण का कार्य करते हैं। यही पाखण्ड है। पाखण्ड और समाज कभी साथ–साथ नहीं रह सकते। इस लिए पाखण्डी मनुष्य कभी सामाजिक नहीं हो सकता।

स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रदर्शित उसी आर्ष क्रान्ति को आगे बढ़ाने की इच्छा से हम इस ***आर्ष क्रान्ति*** पत्रिका के माध्यम से लघु प्रयास कर रहे हैं। हमारे इस वामन संकल्प को विराट् करने के लिए आप सभी ऋषि भक्त मित्रों का सहयोग चाहिए। हम आशा करते हैं कि आप यह कार्य अवश्य करेंगे। इसके लिए प्रचार साहित्य और साधन सामग्री जुटाने के लिए धन चाहिए और कार्य करने वाले समर्पित सहयोगी चाहिए । संसार को महर्षि दयानन्द सरस्वती का ठीक परिचय चाहिए जो अभी तक नहीं कराया जा सका।

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसंनमन्तु।।

– अथर्व. १६/४१/१

– ✍ वेदप्रिय शास्त्री

आर्ष क्रान्ति के सुधी पाठकों से

समाज सुधार, संस्कृति उन्नयन और धर्म जिज्ञासा क्षेत्र की अनेक पत्रिकाएं सोशल मीडिया पर आपने देखी और पढ़ी होगी । आर्ष क्रांति पत्रिका का तेवर और स्वरूप कैसा है इसे जानने की जिज्ञासा आपके मन में पैदा होती है, तो यह समझना चाहिए आप एक विचारवान और जिज्ञासु किस्म के बुद्धिमान व्यक्ति हैं । हमें आप जैसे क्रांतिकारी और प्रगति गामी विचारवान व्यक्ति का साथ चाहिए। फिर देर किस बात की । नीचे लिंक पर जाइए और फार्म भर कर हमें भेज दीजिए। अब आप जुड़ गए हैं ऐसी संस्था और पत्रिका से जो एक आदर्श समाज, उन्नतशील संस्कृति और मानव मूल्यों के धर्म की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है । आप एक शुभ संकल्पवान व्यक्ति हैं और यह पत्रिका भी शुभ संकल्पों को मूर्त रूप देना चाहती है, एक आदर्श समाज निर्माण में हमारी संस्था और पत्रिका से जुड़कर आप अपना अमूल्य योगदान दे सकते हैं । आपका हमें इंतजार रहेगा।

इस लिंक पर क्लिक करके यह फार्म अवश्य भरें

http://bit.ly/aarshkranti

नोट – फॉर्म को भरने के लिए अपने मोबाइल / कंप्यूटर में इन्टरनेट अवश्य चालू रखे

दुख–सुख : वास्तविक कारण और आधुनिक प्रगति

– ✍ अखिलेश आर्येन्दु

पिछले अंक में 'हिरण्यगर्भ बनाम बिग बैंक' पर वैज्ञानिक, तार्किक और वैचारिक दृष्टि से विचार किया गया। यह ऐसा विषय है जिस पर विश्व विद्वत् समाज और वैज्ञानिक अनेक कोणों से अपने–अपने विचार व्यक्त कर रहे हैं। वहीं पर धार्मिक, आध्यात्मिक और सृष्टि विज्ञान को जानने वालों ने इस विषय पर अपने गहन अध्ययनों के द्वारा सृष्टि–उत्पत्ति पर अपने मत प्रकट करते रहे हैं। इस विषय पर हजारों पृष्ट लिखे जा चुके हैं और आगे भी लिखे जाएंगे। आधुनिक विज्ञान ने अनगिनत प्राकृतिक और अप्राकृतिक रूप से मानवता को सुखी बनाने के प्रयत्न किए हैं, आधुनिक विज्ञान से मानव सुख प्राप्त कर रहा है, लेकिन सुख से अधिक वह दुख भोग रहा है। दुखी इस लिए है क्योंकि आधुनिक विज्ञान ने प्राकृतिक, मानवीय, धार्मिक और सृष्टि नियमों की अनदेखी की। रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, जैवीय और परमाणु विज्ञान ने पर्यावरण प्रदूषण, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन, ओजोन परत को हानि पहुंचाने, मानवीय, पारिवारिक, शैक्षिक, धार्मिक, आध्यात्मिक मूल्यों के क्षरण सहित अनगिनत विषयों और विचारों को हानि पहुंचाने का कार्य किए। मानवीय मर्यादा, पारिवारिक मर्यादा, धार्मिक मर्यादा, आध्यात्मिक और शैक्षिक मर्यादाओं के उलंघन आधुनिक विज्ञान ने किए। जिसका परिणाम विश्व समाज में बढ़ रही हिंसा, आत्महत्याओं, भ्रष्टाचार, आतंक, प्रकृतिक संसाधनों का विनाश, मानव का अन्य जीवों के प्रति बढ़ती क्रूरता, हत्या और शोषण के रूप में द्रष्टव्य हो रहा है। आधुनिक विज्ञान से मनुष्य सुखी हुआ है, लेकिन उससे कहीं अधिक वह दुखी हुआ है। आँख झपकते ही परमाणु बमों के विस्फोट से मानवता के विनाश की कुंजी आधुनिक विज्ञान के हाथ में है। यदि विज्ञान ने विश्व को एक गाँव में बदलने का कार्य किया है तो उस गाँव को पल में समाप्त करने के लिए आयुधों का निर्माण कर मानवता को विनाश के कगार पर ला खड़ा किया गया है। इसलिए सुख और दुख के कारणों को समझना आवश्यक है। मैं यह नहीं मानता कि सभी प्रकार के दुखों का कारण आधुनिक विज्ञान है, लेकिन अनगिनत दुखों को खाद–पानी देने में विज्ञान ने अपना वरदहस्त अवश्य आगे बढ़ाया है। प्रस्तुत लेख में दुख के कारणों पर विस्तृत चर्चा की गई है और अगले अंक में इसके उपायों पर गहन चर्चा के साथ–साथ मानवता को सुखी बनाने का कारण और उपाय पर भी गहन चर्चा की जाएगी।

– सम्पादक

दुःख के अनगिनत कारण

धर्म शास्त्रों, पुरातत्त्व, इतिहास, साहित्य और वैदिक अनुसंधानों के अनुसार वेदों के पठन–पाठन काल में मानव निरोगी, दोषों से मुक्त और दुख–दारिद्रय से मुक्त था। ईश्वरीय और प्रकृति के नियमों का पालन करने के कारण वह मानसिक, शारीरिक, आत्मिक दुखों के साथ–साथ आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक दुखों से भी मुक्त था। इसलिए वह सुखी और आनन्द का जीवन व्यतीत करता था।

धीरे–धीरे वेदों का पठन–पाठन कम हुआ जिससे उसमें ज्ञान–विज्ञान, शुभ विचार और करणीय कार्य करने की प्रवृति का ह्रास हुआ। ज्ञान की कमी और शुभ कार्य (शुभ सकल्प के साथ) करने की प्रवृति में कमी आती गई और वह धीरे–धीरे स्वार्थी, अपराधी, स्वच्छन्द रहने और ईश्वरीय आज्ञा भंग करने की प्रवृति मानव में बढ़ने लगी। जो आगे चलकर उसे पतित ही नहीं किया अपितु कई विकारों और दोषों से युक्त भी हो गया। अर्थात् दुख को मानव ने अपने स्वभाव, कार्य और गंदे विचारों के कारण आमन्त्रित किया।

लौकिक और पारलौकिक दोनों का सामन्जस्य जब तक रहता है तब तक व्यक्ति सुखी और आनन्द का जीवन व्यतीत करता है। लेकिन जब एकांगी जीवन बन जाता है और जीवन का उद्‌देश्य मात्र भौतिक सम्पदा, संसाधन जोड़ना ही बन जाता है तब जीवन में नाना प्रकार के दुख अपना पांव पसारने लगते हैं।

अपना वर्चस्व कायम करने के लिए योग्यता और क्षमता का उपयोग न करके अनाधिकार चेष्टा, अपराध करने की प्रवृति, द्वेष और ईर्ष्या से कार्य करना की प्रवृति बढ़ी। इससे मानव स्वयं दुखी हुआ और अन्यों को भी दुखी करता है।

अपराधी प्रवृति और विषय–वासना, दरिद्रता जैसी नकारात्मक प्रवृतियों के कारण मानव रोगों, भोगों और वासनाओं का दास हो गया। दासता सबसे बड़ा दुख है। कहने का भाव यह है कि किसी भी प्रकार की दासता दुख का कारण होती है।

धार्मिक (कर्तव्य–अकर्तव्य का विचार कर) और आध्यात्मिक (हितकारी उद्देश्यपरक विचार व कार्य की प्रवृति के साथ) दृष्टि से जीवनचर्या का पालन करते हुए जीवन व्यतीत करने की प्रवृति धीरे–धीरे समाप्त होने के कारण दुख जीवन का पर्याय बनता गया।

शुभ विचार और शुभ कार्य करने की प्रवृति मानव में जैसे–जैसे कम होती गई वैसे–वैसे वह स्वार्थी, अहंकारी, हिंसक, क्रूर, शोषक, कृपण और पाप करने की प्रवृति वाला होता गया। जिससे दुख जीवन का पर्याय बन गया।

आधुनिक विज्ञान अनेक प्राकृतिक घटनाओं के घटने के पूर्व सटीक सूचना नहीं दे पाता है, जैसे भूकम्प, ज्वालामुखी का फटना, सुनामी और आकाशीय बिजली के गिरने का समय और स्थान। इससे हजारों लोग प्रत्येक वर्ष कालकलवित हो जाते हैं।

जैसे–जैसे वैज्ञानिक प्रगति हो रही है वैसे–वैसे लोग कृतिम सुख के लिए अधिक लालायित रहने लगे हैं। इससे मुद्राओं की आवश्यकता तेजी से बढ़ रही है जिसका परिणाम नाना प्रकार के दुखों और बीमारियों का बढ़ते जाना है।

पिछली एक शताब्दी में मानव ने अपने प्रमुख उद्देश्य को बदल दिया है। अब जीवन का उद्देश्य अतिशय धन–दौलत से भरपूर होना और मौज–मस्ती करना भर रह गया है। इस कारण तामसिक प्रवृति निरन्तर बढ़ रही है जिससे दुख का विस्तार हो रहा है।

प्रकृति और सभ्यता दोनों विरोधी रहे हैं। विश्व की अनेक सभ्यताएं जिनका इतिहास में नाम है उनका कहीं पता नहीं। वहीं पर आधुनिक सभ्यता भी प्रकृति का अत्याधिक दोहन के साथ आगे बढ़ रही है। परिणाम नाना प्रकार के दुख और बीमारियां जीवन का पर्याय बन गई हैं।

वैदिक वर्ण व्यवस्था के अनुसार जब तक समाज की व्यवस्था चलती थी तब तक समाज में किसी भी प्रकार का भेदभाव, ऊँचनीच और छुआछूत का महारोग नहीं फैला था। लेकिन जब गुण–कर्म–स्वभाव के स्थान पर जन्मगत जाति व्यवस्था व्यक्ति, परिवार व समाज का आधार बन गयी तब से अनगिनत प्रकार के जातिगत भेदभाव, छुआछूत और ऊँचनीच की भावना व्याप्त हो गई। मानव मूल्यों का ह्रास का सबसे बड़ा कारण जन्मगत जात–पांत ही है। इस कारण नाना प्रकार के दुख से व्यक्ति, परिवार व समाज दुखी हो रहे हैं।

विज्ञान के नये आविष्कारों के कारण कला–कौशल, व्यापार ने नये प्रकार के रंग में ढाल लिया है। मानव की दौड़–धूप इतनी अधिक बढ़ गई है कि उसे न दिन में चैन और न रात में आराम। धन–दौलत की हवस ने उसे पागल कर दिया है। आश्चर्य की बात धन–दौलत होने के बावजूद वह कई तरह के दुखों से कराह रहा है।

बुद्धि का उछल–कूद कहें या विज्ञान का चमत्कार मानव स्वयं के बनाए आविष्कारों से अपना सर्वनाश करने पर तुला हुआ है। वह प्रकृति को अपना दास बनाकर सुख चाहता है, लेकिन वह सुख की ओर नहीं अपितु दुख की दिशा में ही निरन्तर आगे बढ़ रहा है। भौतिक और आध्यात्मिक नियमों, मर्यादाओं और सिद्धातों में अनेक अन्तर ही नहीं हैं अपितु विरोधी भी हैं। ऐसे में भौतिकता को ही सर्वस्व मानने वाला मानव समाज भला सुखी कैसे रह सकता है?

दो मार्ग हैं– भौतिक उन्नति का मार्ग और अभौतिक उन्नति का मार्ग। भौतिक उन्नति का मार्ग अन्ततः दुख और तमस में ले जाता है और अभौतिक उन्नति का मार्ग प्रारम्भ से ही आनन्द को बढ़ाने वाला होता है। ज्ञातव्य है आज का मानव समाज भौतिक उन्नति को ही सर्वस्व उन्नति मान बैठा है। जहां शाश्वत सुख व आनन्द है ही नहीं, वहां सुख व आनन्द ढूढना मृगतृष्णा से अधिक क्या है?

भौतिक संसाधनों और सुख की लालसा ने मानव को अधिक स्वार्थी, अहंकारी, असंवेदनशील, भ्रष्ट, व्याभिचारी और कपटी बनाया है। निश्चित है इससे दुख ही बढ़ता है, भले ही क्षणिक सुख से मानव स्वयं को सन्तुष्ट कर ले।

इस प्रकार खुले चिन्तन और विवेचना से यह ज्ञात हुआ कि आधुनिक मानव सभ्यता विज्ञान के क्षेत्र में भले ही खूब उन्नति कर ली हो, लेकिन सुख, आनन्द और सन्तोष से वह वंचित हुई है। जीवन पूर्व की अपेक्षा अधिक भाग–दौड़ वाला तो हुआ लेकिन उसके परिणाम 'सुख' नहीं नाना प्रकार के दुख के रूप में समाने आते रहते हैं। इसलिए पश्चिमी देशों के लोग सुख, आनन्द के लिए भारत की ओर देखते हैं, लेकिन भारत भी अब उसी पश्चिमी सभ्यता के अंध–मार्ग पर आगे बढ़ता जा रहा है जहां न जीवन का शाश्वत प्रकाश या आनन्द है और न तो स्थिरता।

मूल्यों का पतन आधुनिक मानव सभ्यता में जितना हुआ है उतना पूर्व में किसी भी सभ्यता में नहीं हुआ था। इसलिए समस्याएं और संकट–प्राकृतिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक हैं। जिसके कारण मानव दुखी हो रहा है, उस कारण को खोजने या समझने के लिए हमारी कोई न रुचि है और न ही तैयारी ही। विकास, प्रगति जितने भी नये शब्द हैं वे भौतिक संसाधनों की उपलब्धता और नये आविष्कारों के कारण नई तरह की तकनीक के प्रयोग से सम्बन्धित है। स्पष्ट है सभी तरह की उपलब्धियों के बावजूद भी मानव समाज पहले से कहीं अधिक बेचैन, दुखी, हताश, परेशान और भ्रमित है।

इसलिए वैदिक विचार धारा भौतिक और अभौतिक दोनों की सन्तुलित उन्नति पर जोर देती है। जब तक इस ओर मानव समाज ध्यान नहीं देगा, वह दुख से निकल नहीं पाएगा, चाहे जितना प्रयास कर ले।

योगदर्शन के प्रथम पाद – समाधिपाद पर योगसूत्रों और उनके व्यासभाष्य पर आधारित ५० प्रश्नों की प्रश्नमाला हमारी www.vedyog.net website पर online test के रूप में उपलब्ध है। हम हिन्दी एवम अंग्रेजी दोनों माध्यम से परीक्षा दे सकते हैं। इसमें हर प्रश्न के उत्तर हेतु ४ विकल्प दिए गए हैं। जिसमें आपको सही विकल्प को चुनना है। परीक्षा के माध्यम से हम अपने योगदर्शन से संबंधित ज्ञान की स्थिति का आकंलन कर पायेंगे।

गुरु गुरु होता है

गुरु ज्ञान का स्त्रोत, प्रथम ज्ञान ईश से आते
अन्य उस ज्ञान के प्रस्तोता, जो गुरु कहाते
धरा पर प्रथम ज्ञान माता से हमको मिलता
मातृ देवो भव, हमारी संस्कृति में जाने जाते।

परा ज्ञान सर्वोत्कृष्ट, परा ज्ञानी संत कहलाते
वेदों में परा,अपरा दोनों ही विद्या पाए जाते
परा ज्ञान से परमेश्वर मिलता है साधकों को
अपरा से जीवन की अन्य समस्या सुलझाते।

माया मोह से मुक्त करते गुरुजन शिष्यों को
माया की ये गठरी होती है बहुत ही निराली
हँस हँसकर पी जाते दुनिया वाले बिन जाने
नहीं सोचते विष से भरी है सोने की प्याली।

माया की गठरी भरने को हैं घूमते गुरुजन
माया का जाल फैला बैठे हैं जो चारों ओर
ज्ञान क्या दे पाएंगे मोह-जाल में फँसे गुरु
धन ,दौलत के माया में जो बँधे हैं घनघोर।

नशा ,वासना में फँसे नहीं कहलाते हैं गुरु
संतानों के लिए नहीं इकट्ठा करते हैं थाती
अज्ञान रुपी अंधकार से जो मुक्ति दिलावे
घर, नगर,महल में जलाए ज्ञान की बाती।

चोरी,झूठ,बलत्कार, बेईमानी और हत्याएं
सारे ही दुर्गुण अंधकार के अंतर्गत हैं आते
दूर करे जो इन सबसे दुनिया के मानव को
वास्तव में वही सच्चे गुरु धरा के हैं कहाते।

राष्ट्र–धर्म और संस्कृति का हो जो महाज्ञानी
देश हेतु स्वयं आगे बढ दे दे अपनी आहुति
आर्य"विश्वामित्र सा माँगे राजा से ही संतान
विदेशी सत्ता उखाड़ फेंकने को बने मारुति।

– ✍ अरुण कुमार आर्य
वाराणसी/चन्दौली

FOURTH ASHRAMA: SAMNYASA

– ✍ Dr. Roop Chandra 'Deepak'
Lucknow (U.P.)
Mob. 9839181690

Vedic Culture speaks of four stages of a man's life span, called ashramas, of which Samnyasa Ashrama is the fourth. It comes after Brahmcharya, Grihastha and Vanaprastha, and therefore means the perfectly matureed and highest stage. The Manusmriti (6.33) says:

वनेषु च विहृत्यैवं तृतीयं भागमायुषः।
चतुर्थमायुषो भागं त्यक्त्वा संगान्परिव्रजेत्।।

[After passing, in the forest, the third quarter of life, i. e., from 50th to 75th years of age, one should renounce the world to become a Samnyasin in the fourth quarter.] This is but a normal guidance, and not a compulsory injunction with regard to the age-group.

Samnyasa is of four kinds:

(1) The first samnyasa is from Vanaprastha, i. e., after passing through Brahmcharya, Grihastha and Vanaprastha. The above age rule applies here, more or less literally.

(2) The second samnyasa is from Grihastha Ashrama, not passing through Vanaprastha, for this reason or that. The age rule is relaxed here to some extent. Grihastha Ashrama, and after the Grihastha Ashrama to step into the Vanaprastha Ashrama and after that to accept the Order of Samnyasa.]

(3) The third samnyasa is direct from Brahmcharya, without entering into Grihastha Ashrama. Vanaprastha ashrama is out of question here, and the age rule relaxed to a great extent.

(4) The fourth samnyasa is that which is taken whenever vairagya occurs, even without a long brahmcharya. There is no age rule in this case.

However, Samnyasa Ashrama is not compulsory for all people. Compulsory is only the Brahmcharya Ashrama, as without brahmcharya a man can be dangerous to a healthy society. He would not be eligible even for a good Grihastha Ashrama, too, what to talk of the Vanaprastha and Samnyasa Ashramas.

Grihastha Ashrama is a should-be conduct, and not a must-be. The boys and girls who have both the ability and the wish, should enter into it. The grihastha persons should not stay in the Grihastha Ashrama for whole life. One day they should leave the family life for both their personal purity and next generation's well being. Literally, vanaprastha means to leave for living in forest. Practically, one should be away from both the sexual intercourse and the house-holding tendency.

According to the Sanskar Vidhi, on the basis of Vedas, Brahmanas and Manusmriti, a man stepping into Samnyasa Ashrama, has to do as follows:

1. After the age of 70 or else, as the case may be, leave all relations and relationships.
2. Take off the yajnopaveet.
3.Take a permanent leave from agnihotra and all mahayajnas except sandhya.
4. Shave the shikha or the lock of hair.
5. Concentrate your mind on God and in renunciation.
6. Take house-holders' shelter for food, clothes and other necessities.
7. Do not own your house etc. any more.
8. Feel no pleasure in life or pain in death.
9. Wait for death or moksha as a servant waits for his master.
10. Put on saffron clothes.

The new samnyasin performs the special yajna, prescribed for this day; gives up the three desires for progeny, money and name (Putraishana, Vittaishana and Lokaishana); takes diksha or direction, with a stick, a special bowl and saffron clothes from his preceptor; and steps out renouncing the world.

Following are the preachings of Rigveda in this matter:-

आ पवस्व दिशां पत
आर्जीकात् सोम मीढ्वः।
ऋतवाकेन सत्येन श्रद्धया तपसा
सुत इन्द्रायेन्दो परि स्रव।।

(Rigveda: 9.113.2)

O new Samnyasin! having conquered your mind and senses, irrigating all hearts with truth, and rearing people from all directions by preaching true knowledge, you please purify your body, mind and intellect, by speaking the just truth, practicing yoga, and attaining simplicity. Then, make your life-journey straight towards God.

ऋतं वदन्नृतद्युम्न
सत्यं वदन्त्सत्यकर्मन्।
श्रद्धां वदन्त्सोमराजन् धात्रा सोम
परिष्कृत इन्द्रायेन्दो परि स्रव।।

(Rigveda: 9.113.4)

O Samnyasin! earner of true wealth and true fame! doer of true Vedic deeds! achiever of the quality of peace! you may, by way of speaking impartial truth,

preaching love in holding truth, giving happiness to all, and purifying yourself by yoga, try your best to realize God.

Manusmriti (6:46, 48, 49) also instructs as follows:

दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं
वस्त्रपूतं जलं पिबेत्।
सत्यपूतां वदेद्वाचं
मनःपूतं समाचरेत्।।
क्रुध्यन्तं न प्रतिक्रुध्येद्
आक्रुष्टः कुशलं वदेत्।
सप्तद्वारावकीर्णां च
न वाचमनृतां वदेत्।।
अध्यात्मरतिरासीनो
निरपेक्षो निरामिषः।
आत्मनैव सहायेन
सुखार्थी विचरेदिह।।

A samnyasin, while walking, may keep his eyes down to the ground; drink water duly filtered with a cloth; always speak the truth; and think well before a deed, so as to accept the truth and reject the untruth.

If a person becomes angry with the samnyasin, he should in turn not get angry; he should behave well even if the other person abuses his words; his speech, opening through seven gates, should never combine with falsehood.

The samnyasin may centre his soul on God; may be free from expectations; abstain from meat; and go about happily with self-help and spiritual knowledge.

Thus Samnyasa is the Ashrama that sets a person moving on the path of moksha or Libration, the highest goal of a soul's journey. Samnyasa Ashrama is the highest of all the Four Ashramas, and it is the duty of a person following the Vedic path to rise upto this Ashrama. The Four Ashramas aim at the optimum development of an individual. We should, therefore, keep our eye on the path reaching the Samnyasa Ashrama.

विष्णु सबका मित्र

• ऋग्वेद :मण्डल–१,सूक्त–९०,मं०–९ :

शं नो मित्रः शं वरुणः
शं नो भवत्वर्यमा।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः
शं नो विष्णुरुरुक्रमः।।

अर्थ –
ईश्वर
नः = हम सबका;
मित्रः = मित्र है (निश्चित मित्र);
वरुणः = वरण करने योग्य है;
अर्यमा = न्यायकारी (सर्वथा, सर्वदा, सब प्राणियों के साथ);
इन्द्रः = परम ऐश्वर्य से युक्तय
बृहस्पतिः = वेदों का उपदेष्टा एवं वाणी का स्वामी;
विष्णुः = सर्वव्यापक;
उरुक्रमः = पराक्रम स्वरूप है;
नः = (वह) हम सबके लिए;
शम् = सुख, शान्ति, आनन्द का दाता;
भवतु = होवे।

• (विष्णुः) सर्वव्यापक होने से ईश्वर का नाम 'विष्णुः' है।

• (वरुणः) ईश्वर ऐसा है कि उसका वरण किया जा सकता है; हम उसका वरण कर सकते हैं।

• 'मित्र' शब्द संस्कृत में नपुंसकलिंग; केवल ईश्वर के लिए पुँल्लिंग है –
श्यामः रामस्य मित्रम्;
उमा रमायाः मित्रम्;
क्षत्रियकुलं ब्राह्मणकुलस्य मित्रम्;
ईश्वरः सर्वस्य मित्रः।

• मनुष्य किसी का मित्र, किसी का शत्रु और किसी से उदासीन है; ईश्वर सबका मित्र है, किसी का शत्रु नहीं, किसी से उदासीन भी नहीं है।

– आचार्य रूपचन्द्र 'दीपक'

शिशु जन्म को निरापद बनाता है जातकर्म संस्कार

– ✍ डॉ. विक्रम कुमार विवेकी

पिछले अंक में सीमान्तोंन्नयन संस्कार क्या है, कैसे करना और क्यों करना चाहिए विषय पर वैज्ञानिक विधि से बताया गया। सीमान्तोन्नयन के बाद वैदिक परम्परा में जातकर्म संस्कार किया जाता है। पूर्व के तीनों संस्कारों को विधिवत् करने के बाद शिशु जन्म को निरापद बनाने और उसमें यशस्वी और तीनों प्रकार की बुद्धियों का समावेश की कामना से जातकर्म संस्कार अत्यन्त उपयोगी है। मानव का सही अर्थों में निर्माण के लिए जितना गर्भाधान, पुंसवन और सीमान्तोन्नयन संस्कारों का महत्व है उतना महत्व जातकर्म का भी है। इसलिए इसे महर्षि दयानन्द कृत संस्कार विधि के माध्यम से करना चाहिए। जिन आर्य महानुभावों ने संस्कार विधि से संतान उत्पन्न करी, उनकी संतानें यशस्वी, प्रज्ञावान, मेधावान और शारीरिक रूप से बलिष्ठ उत्पन्न हुईं। राम, कृष्ण, गौतम, दयानन्द और योगी अरविन्द का जन्म वैदिक परम्परा के अनुसार हुआ। जातकर्म ऐसा संस्कार है जिससे शिशु जीवन में पूर्णता आती है। राष्टभक्त, मातृ–पितृ भक्त, ऋषि भक्त और मानवता का उन्नयन चाहने वाली संतान संस्कारों से ही उत्पन्न होती है। शुभ संकल्पवान्, शुभ उद्देश्य परक और धैर्य जैसे सद्गुणों का समावेश शिशु काल से ही हो, इसके लिए भी आवश्यक है जातकर्म संस्कार। आज के प्रदूषित वातावरण, हिंसक, स्वार्थवादी, अनैतिक और अधार्मिक वातावरण में वैदिक संस्कारों की महत्ता और भी बढ़ जाती है। इसलिए उनकी महत्ता और उपयोगिता को देखते हुए जातकर्म संस्कार को उसी तरह करना सुनिश्चित करना चाहिए जैसे अन्य संस्कार किए जाते हैं। आर्य जगत् के महान् विद्वान् डॉ. विक्रम कुमार विवेकी द्वारा लिखित यह लेख पाठकों को पसन्द आएगा ऐसी आशा है ।

– सम्पादक

क्या है जातकर्म

शिशु–जन्म से पूर्व किये जाने वाले तीन गार्भिक संस्कारों के पश्चात् कुछ संस्कार 'नामकरण' 'निष्क्रमण', 'अन्नप्राशन' आदि ऐसे हैं जो घर में गृहसदस्यों एवं बन्धु–बान्धवों के मध्य किये जाते हैं। चूड़ाकर्म, कर्णवेध संस्कार भी गृह में करणीय हैं। जातकर्म ऐसा संस्कार है जिसे डाक्टर की देखरेख एवम् अन्य सुविधाओं से पूर्ण घर में या फिर हास्पिटल में किया जाता है।

जायमानाय शिशवे जातस्य वा शिशोः कर्म जातकर्म।

इस निर्वचन से प्रसूतगृहो में रहे शिशु के लिए या प्रसूत हो चुके शिशु के लिए जो कर्म किया जाता है, उसे जातकर्म संस्कार कहते हैं।

एजतु दशमास्यो गर्भो जरायुणा सह। यथाय वायुरेजति यथा समुद्र एजति। एवायं दशमास्योऽ अस्त्रज्जरायुणा सह।

यह गर्भ, जो दश चान्द्र मास पूर्ण कर चुका है, वह जेरी के साथ गर्भ से बाहर आये। जैसे वायु कम्पायमान है और समुद्र की तरंगें गतिशील हैं वैसे ही यह शिशु गर्भ से बाहर सरलता से लटक या टपक पड़े, निकल आये। यह शिशु जरायु के साथ गर्भाशय की थैली को अथवा उस के अन्य किसी भाग को साथ में घसीट न लावे।

इस संस्कार के विधि भागों एवं विनियुक्त मन्त्रों के अर्थों से यह स्पष्ट होता है कि प्रसव निर्बाध व निर्विघ्न सम्पन्न हो, जात शिशु व प्रसवा माता दोनों को कोई हानि न हो। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में इस संस्कार का वैज्ञानिक व व्यावहारिक विवेचन मिलता है। ये ग्रन्थ सावधानी पूर्वक प्रजनन–प्रक्रिया को सम्पन्न कराने का निर्देश देते हैं। किस प्रकार गर्भिणी स्त्री को कुठ, लांगली, बच, चित्रक, करंच आदि आयुर्वेदिक औषणियों के चूर्ण सुंघाने से तथा आसन्न–प्रसवा माता की कटि, पार्श्व, पीठ और अंगों को गुनगुने तेल से धीरे–धीरे मलने से बाहर आने के पश्चात् जरायु (जेर) के बाहर न निकलने पर किस प्रकार योन–मार्ग में विविध औषधियों का धुंआ दिया जाता है। नाना जड़ी–बूटियों का क्वाथ पिलाया जाता है। सहयोगिनी अन्य समीपस्थ स्त्रियों (नर्सो) द्वारा विविध

क्रियाओं के माध्यम से सहायता की जाती है। इन सब बातों का विवरण पाठकों को 'चरक' ग्रन्थ में देखना चाहिए।

गर्भ से बाहर आने पर शिशु रोता है, जिससे वायु उसके फेफड़ों में की जाती है और वह श्वास लेने लगता है। तरीके से प्रसव न कराने पर रोग के कीटाणु योनि से गर्भाशय में प्रवेश कर प्रसूति–ज्वर पैदा करते हैं तथा ठीक–ठीक स्वछच्ता से नाभि–सूत्र (नाल) को न काटने पर कीटाणु शिशु के पश्चात् क्रियमाण जो कर्म हैं उनमें श्लेष्मा से परिपूर्ण शिशु के अंगों का स्वच्छीकरण, नाभि–सूत्र कर्तन, जल से मार्जन, मन्त्रों के द्वारा उपमन्त्रित मधु और घी को स्वर्ण शलाका के माध्यम से शिशु की जिह्वा पर प्राशन, समय–समय पर तैल–मर्दन, उबटन व स्नान, माता के द्वारा स्तनपान कराना आदि प्रमुख हैं, जिनका विधान स्वामी दयानन्दकृत संस्कारविधि एवं चरक में उपलब्ध है। गृह्यसूत्रों में भी इन विधि–विधानों का विशिष्ट विश्लेषण प्राप्त होता है।

शिशु के जन्म के अनन्तर अत्यधिक झंझट समुपस्थित हो जाते हैं। मां रात–दिन जगती है। अतः पिता वैदिक ऋचा संस्कारविधि जातकर्म के माध्यम से उसे सम्बोधित करता है –

अगड़ाद् अगड़ात सम्भवसि हृदयाद् अधिजायसे।
प्राणं ते प्राणेन संदधामि जीव मे यावदायुषम्।।

हे पुत्र तू मेरे अंग–अंग से चुआ है बना है। मेरे हृदय से उत्पन्न हुआ है। मैं तेरे प्राण को अपने प्राण से संयुक्त करता हूं। प्रियपुत्र, तू पूर्ण आयु का उपभोग कर।

इस प्रकार माता शान्ति से प्रसव करे, शिशु कष्टरहित जन्म लेवे, दोनों स्वस्थ व निरोग रहें, एतद्विषक उपायों का पालन व शास्त्र प्रतिपादित संकेतों पर आचरण ही 'जातकर्म संसकार' है जिसे आज हास्पिटलों के प्रसूति–गृह में ही कराया जाता है।

सुन्वनायेन्द्रो ददात्याभुवं रयिम्।

(ऋग. १.१३३.७)

यज्ञकर्त्ता परोपकारी को प्रभु बार बार धन देता है।

वेद – महिमा

वेद– ज्ञान की ज्योति जलायें, घर–घर वेद पढ़ाए हम।
अलख जगायें मानवता की, मिलकर भेद मिटायें हम ।। १।।

शुभ –कर्मों को करें सर्वदा ,
अंतस में यज्ञ –भाव भरें।
वेद –ऋचाओं को गायें हम,
सदा ओउम का जाप करें ।।२।।

वेद –मार्ग पर चलें सभी जन,
जीवन का कल्याण करें ।
सकल विश्व में वेद– धर्म का,
फिर से नव– निर्माण करें ।।३।।

चतुर्वेदों का पारायण कर ,
वेदों की महिमा गायें ।
मिथ्या , पाखंडों को तजकर,
सत्य –ज्ञान को अपनायें।।४।।

वेद पठन का जनमानस को,
सबको सम– अधिकार दिया।
स्वामी दयानंद सरस्वती ने
वेदों का उद्धार किया।।५।।

सत्य –सनातन वेद– धर्म का,
जग में 'अमित' प्रसार करें
वेदों के विद्वान बने हम,
नितप्रति वेद –प्रचार करें।।६।।

– डॉ. सुशील कुमार त्यागी 'अमित'
हरिद्वार

पुराण किसने बनाये ?

— ✍ अमर हुतात्मा धर्मवीर पण्डित लेखराम

हमारे भोले भाले हिन्दू भाई समझे बैठे हैं कि अठारह पुराण (मारकण्डेय, भविष्य, भागवत, ब्रह्मवैवर्त्त, ब्रह्माण्ड, शिव, विष्णु, वराह, लिंग, पद्म, नारद, कूर्म, मत्स्य, अग्नि, ब्रह्म, वामन, स्कन्द गरुड) और अठारह उपपुराण (आदि, नरसिंह, वामन, शिवधर्म, दुर्वासा, कपिल, नारद, वरुण, साम्ब, कलकी, महेश्वर, सौर, स्कन्द पराशर, मारीच भास्करः, औशनस, ब्रम्हा) व्यास जी ने बनाये हैं जो कि पराशर के पुत्र थे और महाराजा युधिष्ठिर के समय में विद्यमान थे। जिस समय से वर्तमान काल के कलियुग का प्रारम्भ होता है जिसको आज तक 4991 वर्ष होते हैं, किन्तु पुराणों के अध्ययन से प्रगट होता है कि उनका यह विचार उपयुक्त नहीं है, यह बात निम्नलिखित प्रमाणों से प्रमाणित हो जाएगी। आशा है कि धर्म के जिज्ञासु पक्षपात रहित होकर इसे पढ़ेंगे।

प्रथम प्रमाण — अठारह पुराणों में बुद्ध को अवतार स्वीकार किया है और जिस लेख में वर्णन है, उसमें से उनका अतीत काल प्रतीत होता है, भविष्य का नहीं। जो उनकी रहन सहन की पद्धति वर्णित है, वह आजकल के जैनियों के (पूज्यों) गुरुओं से ठीक मिलती है उससे स्पष्ट प्रगट है कि जिस समय अठारह पुराण बनाये गए, उससे पूर्व बुद्ध का अवतार हो चुका था। (देखो शिव पुराण पूर्वार्द्ध खण्ड अ. 5—3—9)

किन्तु इतिहास के विशेषज्ञों ने, चिह्न, स्मृति, स्तम्भ और बौद्ध मन्दिरों तथा आर्यावर्त, लंका, ब्रह्मा, चीन और तिब्बत की पुस्तकों और अजाएब घरों की मूर्तियों से खोज की है कि बुद्ध विक्रमाजित संवत् से 614 वर्ष पूर्व हुए थे और 80 वर्ष जीवित रहकर निधन को प्राप्त हुए, जिसे आज तक दो सहस्र पांच शत् बासठ वर्ष (२५६२ वर्ष) होते हैं और व्यास जी को चार सहस्र नौ सौ इकानवे वर्ष(४६६१ वर्ष) ख्आर्य पथिक श्री पं० लेखराम जी ने अपनी पुस्तकों में जहां—जहां तिथियों की गणना लिखी है, वह गणना उस पुस्तक मुद्रण काल से लिखी गई है। —अनुवादक, हुए हैं अर्थात् बुद्ध दो सहस्र चार सौ उन्नीस वर्ष व्यास जी के पीछे हुए हैं। इससे सिद्ध हुआ कि व्यास जी पुराणों के रचयिता नहीं थे।

द्वितीय प्रमाण — समस्त इतिहासज्ञ इस बात को स्वीकार करते हैं कि रामानुज विक्रमादित्य की द्वादशवीं शती में हुए किन्तु वैष्णव मत का खण्डन लिंग पुराण में विद्यमान है।

शंख चक्रे तापयित्वा यस्य देहः प्रशस्यते।
संजीवन् कुणपस्त्याज्यः सर्वधर्म बहिष्कृतः।।

— लिंग पुराण

जिससे शरीर पर तपाकर शंख चक्र के चिह्न लगाये गए हैं वह जीता हुआ भी मृतवत् है और सर्व धर्म कार्यों से बहिष्कृत कर देने के योग्य है।

इससे प्रगट होता है कि रामानुज के मत के पश्चात् लिंग पुराण में उसका खण्डन हुआ। क्योंकि यह सर्व सम्मत है कि जो बात न हो चुकी हो उसका खण्डन नहीं हो सकता और लिंग पुराण अठारह पुराणों में संख्यात है। अतः रामानुज विक्रमाजित की बारहवीं शती में हुए हैं, अर्थात आज तक उनको हुए 748 वर्ष हुए हैं और जैसाकि ऊपर लिखा जा चुका है कि व्यास जी को 4991 वर्ष हुए हैं जिससे सिद्ध है कि व्यास जी से रामानुज 4243 वर्ष पीछे हुए है अतः लिंग पुराण व्यास कृत नहीं हो सकता।

तृतीय प्रमाण — तौजके जहांगीरी नायक पुस्तक में जहांगीर बादशाह लिखता है कि में पिता के राज्यकाल में अमरीका से एक पादरी आलु, तम्बाकू, गोभी यह तीन वस्तुयें लाया था। इस बात पर समस्त ऐतिहासिक एक मत हैं किन्तु ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है कि —

प्राप्ते कलियुगे घोरे सर्ववणश्रिमे नरः।
तमालं भक्षितं येन स गच्छेन्नरकार्णवे।।

— ब्रह्माण्ड पुराण

इस घोर कलियुग में जो मनुष्य तम्बाकू का सेवन करता है वह नरक को जाता है। और पद्म पुराण में लिखा है कि —

धूम्रपानरतं विप्रं दानं कुर्ण्वंतिये नराः।
दातारी नरकं यान्ति ब्राह्मणो ग्राम शूकरः।।
–***पद्म पुराण***

जो मनुष्य तम्बाकू पीने वाले को दान देते हैं वह नरक गामी होते हैं और वह तम्बाकू सेवी ब्राह्मण ग्रामों में शूकर का जन्म लेता है।

हिन्दुओं की किसी धर्म पुस्तक में तम्बाकू का निषेध नहीं है और तम्बाकू अमरीकी भाषा का शब्द है और बाबा नानक जी से लेकर उनकी सातवीं बादशाही तक किसी ने तम्बाकू पीने का खण्डन नहीं किया क्योंकि यह उस काल में विद्यमान नहीं था। जब जहांगीर बादशाह के राज्यकाल में उसकी प्रथा चली तो औरंगजेब के राज्य काल में दसवीं बादशाही के समय उसका निषेध किया गया। इससे प्रगट होता है कि ब्रह्माण्ड और पद्म पुराण दोनों जहांगीर के पिता अकबर के राज्यकाल से पीछे बनाये गए और सम्राट् अकबर का राज्यकाल विक्रमाजित के संवत् 1613 से 1662 तक हुआ था।

इससे सिद्ध होता है कि ब्रह्मांड और पद्मपुराण व्यास जी के निर्मित नहीं है। क्योंकि व्यास जी को हुए 4991 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। इन पुराणों को निर्मित हुए (1948–1662)–286 वर्ष हुए हैं।

चतुर्थ प्रमाण – स्वामी शंकराचार्य रामानुज से पूर्व हो चुके थे क्योंकि रामानुज ने शांकरभाष्य का निषेध किया है। सभी में यह बात प्रगट है कि शंकराचार्य सर्व संसार को माया और स्वयं को ब्रह्म मानते थे और सभी हिन्दू शंकराचार्य को महादेव का अवतार मानते हैं और उनका बुद्ध से पूर्व होना सम्भव नहीं क्योंकि उन्होंने बौद्धों का खण्डन किया है। पद्म पुराण में पार्वती जी के उत्तर में महादेव कहते हैं कि –

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छंन्नबौद्धमेव च।
मयैव कथितं देवि कलौ ब्राह्मणरूपिणा।।

अर्थ– हे देवि ! कलियुग में मैंने ब्राह्मण का रूप धारण करके असत् शास्त्र, प्रच्छन्न बौद्ध मायावाद का कथन किया।

अतः 'पद्म पुराण', बुद्ध, शंकर और रामानुज के पश्चात् बना है। यह व्यास जी का बनाया हुआ कभी भी नहीं हो सकता।

पंचम प्रमाण – जगन्नाथ का मन्दिर संवत् 1231 विक्रमी में उड़ीसा के राजा अनंग भीमदेव ने बनवाया था, इससे पूर्व नहीं था। इसमें सभी ऐतिहासिक एकमत हैं। और मन्दिर में भी संवत् लिखा हुआ है किन्तु मन्दिर का महात्म्य स्कंद पुराण में लिखा है, अतः स्कंद पुराण संवत् 1231 विक्रमी के पीछे बना और व्यास देव का बनाया हुआ कभी नहीं हो सकता।

षष्ठ प्रमाण – समस्त विद्वानों की इस विषय में सहमति है कि अठारह पुराण महाभारत से पीछे बनाये गए हैं और पुराणों में महाभारत का वर्णन है परन्तु महाभारत में पुराणों का उल्लेख नहीं है और सभी जानते हैं कि शुकदेव जी ने राजा परीक्षित को भागवत सुनाया था। इतिहास देखने से ज्ञात होता है कि कौरव पांडव युद्ध के पश्चात् महाराजा युधिष्ठिर सिंहासनारूढ़ हुए थे, उन्होंने 26 वर्ष 8 मास और 25 दिन राज्य किया। उनके मरणानंतर राजा परीक्षित ने 60 वर्ष राज्य किया।

भागवत में लिखा है कि राजा परीक्षित के राज्य समाप्ति काल अर्थात् महाभारत के 86 वर्ष के पश्चात् शुकदेव जी ने उनको भागवत सुनाया किन्तु महाभारत के शान्ति पर्व के 332 और 333 अध्यायों से सिद्ध होता है कि जब युद्ध समाप्त हुआ और भीष्म जी के अन्त समय पर युधिष्ठिर , जी उनसे उपदेश सुनने गये तब उन्होंने शुकदेव जी का वर्णन करते हुए कहा कि बहुत समय हुआ कि उनकी मृत्यु हो गई और उनके मरने पर व्यास जी का शोक मग्न होना भी लिखा है। युधिष्ठिर जी इस प्रकार से पूछते हैं, मानो उन्होंने देखा ही नहीं था और उस समय राजा परीक्षित गर्भ में थे। जब परीक्षित के जन्म से पूर्व ही शुकदेव जी मर गये थे तो उनको 96 वर्ष पश्चात् भागवत सुनाना असम्भव है और सत्य यह है जैसा कि देवी भागवत के अनुवादक ने लिखा है कि वास्तव में भागवत बोपदेव ने रचा है और जब भागवत शुकदेव ने नहीं सुनाया तथा परीक्षित ने नहीं सुना, जिनसे व्यासदेव बहुत पहिले हो चुके हैं तो सिद्ध हुआ कि व्यास देव जी भागवतकार नहीं हैं।

सप्तम प्रमाण – पद्म पुराण के उत्तरखण्ड के भागवत महात्म्य के प्रथमाध्याय में श्लोक 28 से 32 तक लिखा है कि नारद जी व्याकुल अवस्था में सनकादि को मिले और कहा कि काशी, सोमनाथ, रामेश्वर आदि स्थानों पर यवनों ने मन्दिरों को गिरा दिया और उन पर अधिकार लिया अर्थात् मसजिदें बनाली और यही

अवस्था आश्रमों की हुई। किन्तु स्पष्ट है कि यह अब महमूद के समय से औरंगजेब के समय तक होती रही। अतः स्पष्ट प्रगट है कि पद्म पुराण को बने हुए संवत् 1014 से 1326 का समय हुआ है।

अष्टम प्रमाण – अठारह पुराणों में ऋषि मुनियों और देवताओं की निन्दा लिखी है और पर मिथ्या कलंक लगाये हैं ? जैसा कि –

1. ब्रह्मा जी पर पुत्री समागम का कलंक।
2. कृष्ण जी को कुआ और राधिका है।
3. महादेव जी को ऋषि पत्नियों से।
4. विष्णु को जलंधर की स्त्री वृंदा से।
5. इन्द्र को गौतम की स्त्री से।
6. सूर्य को कुन्ती से।
7. चंद्रमा को अपने गुरु बृहस्पति को स्त्री तारा से।
8. वायु देवना को केसरी बन्दर की स्त्री अंजना से।
9. वरुण देवता को अगस्त्य देवता की माता उर्वशी से।
10. बृहस्पति को अपने भाई की स्त्री ममता से।
11. विश्वामित्र को उर्वशी से।
12. पराशर को मत्स्योदरी से।
13. देव को दासी से।
14. द्रौपदी को पांच पतियों से।
15. देवियों को मांसभक्षा से।
16. वामन को छल से।
17. बलदेव को मद्यपान से कलंकित किया है तथा
18. रामचंद्र को छल से सूरमा बालि के वध आदि का कलंक तथा सब ऋषि, मुनि, देवताओं पर कलंक लगाया परन्तु बुद्ध पर कोई कलंक नहीं लगाया और नास्तिक मत को कई स्थानों पर प्रगट किया है, इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि पुराणों के रचयिता बौद्ध हैं, व्यासदेव जी नहीं।

नवम प्रमाण – व्यास कृत वेदान्त सूत्रों और योग भाष्य से संसार में स्पष्ट रूप से उनका धर्म समस्त विद्वानों पर प्रगट है किन्तु यह अठारह पुराण उनके स्पष्ट विरुद्ध हैं उनका अभिप्राय उनके लिये शास्त्रों से नहीं मिलता इससे अच्छी प्रकार विदित होता है कि यह पुराण उनके दाग निर्मित नहीं हैं।

दशम प्रमाण – देवी भागवत में लिखा है कि एक राजा का लड़का किसी एक म्लेच्छ वेश्या पर आसक्त होकर पतित हो गया। यह बात तो सूर्यवत् स्पष्ट है कि जब मुसलमान नहीं आए थे तब मुसलमान वेश्याएं भी न थीं तो उन पर कोई आसक्त भी न हो सकता था अतः इससे प्रगट् है कि देवी भागवत मुस्लिम काल में बना है और व्यासदेव जी ने नहीं बनाया है।

धर्म शास्त्र के अनुसार ब्राह्मण का कार्य पढ़ना और पढ़ाना है जैसा कि मनुस्मृति में लिखा है कि –

योऽनधीत्यद्विजो वेदमन्त्रयत्र कुरुते श्रमस्।
सजीवन्नेव शूद्रत्वमाशुगच्छति सान्वयः।।

अर्थ – जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वेदों को नहीं पढ़ता और अन्य कार्यों में परिश्रम करता है। तो वह जीवन में ही शीघ्र सपरिवार शूद्रत्व को प्राप्त करता है। देखिये अत्रीस्मृति में भी लिखा है कि –

वेदर्विहीनाश्च पठन्ति शास्त्रं शास्त्रेण हीनाश्च पुराण पाठाः।
पुराण हीना कृषिणो भवन्ति भ्रष्टास्ततो भागवताः भवन्ति।।

अर्थ – वेद विहीन लोग शास्त्र पढ़ते हैं, शास्त्र से पतित लोग पुराण पढ़ते हैं, पुराण विहीन सो कषि कार्य करते हैं और सबसे पतित लोग भागवत पढ़ने वाले होते हैं।

जहांगीर के राज्यकाल में भक्त तुलसीदास जी का निधन हुआ था।
यथा–

संवत सोला सौ अस्सी असी गंग के तीर।
सावन शुक्ला पंचमी तुलसी तन्यो शरीर।।

जहागीर संवत् 1684 में दिवंगत हुआ था। इससे सिद्ध हुआ कि तुलसी रामायण को बने हुए 1948–1684 त्र 264 वर्ष हुए।

इन प्रमाणों से स्पष्ट प्रगट होता है कि समस्त पुराण नवीन हैं। केवल चारों वेद ही सनातन हैं।

आर्ष क्रान्ति पत्रिका के लिए आर्य लेखक बन्धु अपनी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ भेंजे।

चेतना–विज्ञान और आत्म–विज्ञान की विकास–यात्रा

– ✍ ए.ए.सत्पथी

महान् वैज्ञानिक आइंस्टीन जिन्होंने सापेक्षता के भौतिक सिद्धांत के माध्यम से विज्ञान जगत् में अदभुत क्रांति की। वे ऐसे महामानव थे जिन्होंने चेतना विज्ञान को मानव सभ्यता के विकास के लिए अत्यंत जरूरी माना। चेतना विज्ञान से ही सही मायने में दूसरे सभी विज्ञानों को दिशा दी जा सकती है और विश्व समाज को विध्वंस से बचाया जा सकता है। आज हर व्यक्ति को आइंस्टीन के इस विचार पर अमल करने की जरूरत है।

अचानक अतःस्फुरण हुआ, वह चौक गए। सारा शरीर एक अदभुत किस्म की ऊर्जा से भर गया। पहली बार उनकी जिंदगी में इस तरह की घटना घटी थी। वैसे तो रोजाना अंतरमुखी होने पर कुछ अलग तरह का एहसास होता है, लेकिन उसकी तरफ उन्होंने कभी गहराई से विचार नहीं किया। हां, इतना जरूर वह सोचते– एकाग्र मन की दशा में ऐसी स्थिति का होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। लेकिन आज जो कुछ एकदम नया घटित हुआ था, उस पर वे कई घंटे विचार करते रहे।

सुबह होने वाली है। वातावरण की निस्तब्धता धीरे–धीरे खत्म हो रही है। पक्षी पेड़ों पर चहचहाना धीरे–धीरे शुरू कर रहे हैं। नीरवता की जगह चहल–पहल लेने लगा है। ऐसे में चेतना में कुछ अचानक घटित हो, समझना जरा मुश्किल होता है। आज का दिन उनकी जिंदगी के लिए सबसे अहम है। वह विचारों में खोना नहीं चाहते, बल्कि जो नया अतःचेतना में घटित हुआ, उसे समझना चाहते हैं। लेकिन अंतःचेतना को समझना इतना सहज और सरल है?

दरअसल, यह चेतना का जीवन–विज्ञान है, जो वक्त–दर–वक्त हमें स्वयं से जुड़ने के लिए प्रेरित करता है। आमतौर पर हम न तो जीवन से जुड़े होते हैं और न तो अंतः चेतना विज्ञान से। हम रात–दिन सांसारिकता से जुड़े होते हैं। और यह सांसारिकता हमें बहुत कुछ सिखाती है, हमें तरासती है और सांसारिक प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए हर पल उकसाती या प्रेरित करती है। वहीं दूसरी तरफ जब अतःप्रेरणा से हम कार्य करने लगते हैं और अपने चेतना विज्ञान को अहमियत देने लगते हैं तब यही सांसारिक प्रतियोगिता हमें संसार की निस्सारता से हटने के लिए प्रेरित करती है।

जो सांसारिक प्रतियोगिता की निस्सारता को जीवन के शुरुआत में ही समझ लेता है, उसका रास्ता चेतना विज्ञान की तरफ मुंड़ जाता है और वह गौतम बुद्ध, कबीर, महावीर स्वामी और महर्षि दयानंद बन जाता है। फिर वह सांसारिक विज्ञान से उतना ही वास्ता रखता है जितने से उसका जीवन बसर हो जाए। अपनी चेतना, बुद्धि, आत्मा और जीवनीशक्ति के जरिए चेतना को उत्कृष्ट बनाकर समाज की अपवित्रता, अज्ञानता, पाखंड, बुराइयाँ, कुरीतियों और विकृतियों को समाप्त करने में लगा देता है। चेतना विज्ञान के उपयोग का यह सबसे सफल और सर्वहितकारी पक्ष है। इसमें स्वयं का हित, साथ में सर्वहित।

मानव जीवन दर्शन का यह सबसे आदर्श रूप कहा जा सकता है। साधारण व्यक्ति इस जीवन आदर्श को इस लिए अपनाना नहीं चाहता, क्योंकि यह संयम, त्याग, परोपकार, ज्ञान, चेतना विज्ञान और आत्मपरिष्कार का रास्ता है। इससे खुद के स्वार्थ का किसी न किसी रूप में क्षरण होता है। सदगुणों का ग्रहण और दुरगुणों को छोड़ने का रास्ता है यह। आमतौर पर ऐसी बातें धर्म, योग या अध्यात्म की कह कर छोड़ दी जाती हैं, लेकिन यह चेतना विज्ञान की बात है। चेतना विज्ञान से ही सभी विज्ञानों का जन्म होता है।

जब मानव स्व मन के मुताबिक हर चीज को देखने और समझने की कोशिश करता है, तब वह संवेदना, सुचिता, शांति, प्रेम, सदाशयता और सर्वसुख जैसे मूल्यों से बेखबर रहता है। वह न तो जीवन जीना जान पाता है और न तो जीवन विज्ञान को ही। इस कारण वह सांसारिकता में लगातार उलझता जाता है और इसी को ही असली जीवन मानता है। वह जिंदगी में ऐसी सुबह ढूढता रहता है जो हर पल उसके जिंदगी का

हिस्सा बनी रहे। सारे सुख उसे हासिल हो, चाहे उसके लिए उसे कुछ भी अच्छा–बुरा करना पड़े। लेकिन वह कभी यह नहीं सोचता कि इस प्रकृति में किसी भी व्यक्ति को सभी तरह के सुख न कभी मिलें हैं और न मिल सकते हैं। कुदरत ने हर व्यक्ति की योग्यता और संकल्प के मुताबिक जो सुख देना होता है दे देती है, लेकिन इंसान अपने पुरुषार्थ के बल पर सब कुछ प्राप्त करना चाहता है। यह बात अलग है कि वह इसमें कितना कामयाब होता है।

चेतना विज्ञान से इंसान में जिज्ञासा, खोज की प्रवृति, समय का संयम, आत्म–शांति और धैर्य जैसी प्रवृतियों का निरंतर विकास होता जाता है। इसका प्रयोग जीवन में लगातार करते रहना चाहिए। इससे सबसे बड़ा फायदा यह होता है कि व्यक्ति एकांगी बनने से बच जाता है। उसकी सोच सर्वजन हिताय–सर्वजन सुखाय की बन जाती है। व्यक्ति को अपने विचारों, धारणाओं, मान्यताओं की समीक्षा हमेशा करते रहना चाहिए। यह भी चेतना विज्ञान का अभिन्न अंग है। इससे जीवन का गणित कभी नहीं गड़बड़ाता है। भौतिक संसाधनों की जरूरत, धार्मिक कार्यों की प्रवृति, आध्यात्मिक पूंजी का संग्रह और सांसारिक और परलौकिक दोनों का संतुलन बनाने में सफलता मिल जाती है। यह बिना चेतना विज्ञान के सम्भव ही नहीं है। जीवन का सूत्र और जीवन–दर्शन दोनों चेतना विज्ञान से आसानी से प्राप्त हो जाते हैं। कल्पना लोक और स्वप्न लोक से निकल कर यथार्थ लोक का हिस्सा बनने का सबसे सुगम और एक मात्र रास्ता, चेतना विज्ञान का है। इसके लिए किसी गुरु की भी जरूरत नहीं होती। चेतना हमारी गुरु है, यही मित्र और माता–पिता भी यही है। हम अपनी चेतना को अतःप्रेरणा के साथ जोड़कर एक अविकारी मानव बन सकते हैं और समाज को पवित्रता की ओर प्रेरित कर सकते हैं।

वर्ण व्यवस्था

यस्क मुनि के अनुसार–

जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् भवेत द्विजः। वेद पाठात् भ? वेत् विप्रः ब्रह्म जानातीति ब्राह्मणः।।

अर्थ *– व्यक्ति जन्मतः शूद्र है। संस्कार से वह द्विज बन सकता है। वेदों के पठन–पाठन से विप्र हो सकता है। किंतु जो ब्रह्म को जान ले, वही ब्राह्मण कहलाने का सच्चा अधिकारी है।*

योग सूत्र व भाष्य के रचनाकार पतंजलि के अनुसार–

विद्या तपश्च योनिश्च एतद् ब्राह्मणकारकम्।विद्यातपोभ्यां यो हीनो जातिब्राह्मण एव सः।।

अर्थ *– "विद्या, तप और ब्राह्मण–ब्राह्मणी से जन्म ये तीन बातें जिसमें पाई जायँ वही पक्का ब्राह्मण है, पर जो विद्या तथा तप से शून्य है वह जातिमात्र के लिए ब्राह्मण है, पूज्य नहीं हो सकता" (पतंजलि भाष्य 51–115)।*

महर्षि मनु के अनुसार–

विधाता शासिता वक्ता मो ब्राह्मण उच्यते।
तस्मै नाकुशलं ब्रूयान्न शुष्कां गिरमीरयेत्।।

अर्थ *– शास्त्रो का रचयिता तथा सत्कर्मों का अनुष्ठान करने वाला, शिष्यादि की ताडनकर्ता, वेदादि का वक्ता और सर्व प्राणियों की हितकामना करने वाला ब्राह्मण कहलाता है। अतः उसके लिए गाली–गलौज या डाँट–डपट के शब्दों का प्रयोग उचित नहीं" (मनुय 11–35)।*

महाभारत के कर्ता वेदव्यास और नारदमुनि के अनुसार–

"जो जन्म से ब्राह्मण हे किन्तु कर्म से ब्राह्मण नहीं हे उसे शुद्र (मजदूरी) के काम में लगा दो"

स्वयं को खोजता हुआ आधुनिक मानव

– ✍ डॉ. ए.कुमार

जाति, धर्म, वर्ग, दल, क्षेत्र, संस्कृति, भाषा और देश में बटा हुआ आदमी स्वयं को कितना अखण्ड समझता है। वह धन–दौलत, पद, प्रतिष्ठा और डिग्री के अहंकार में कितना दीनहीन बन गया है! वह समझ नहीं पा रहा है जिस उच्चता के फेन के बुजबुजे में इतराता और तैरता है, क्या उसका वजूद दो–चार पल के लिए हैं भी कि नहीं? उसके मन के विद्वेष, आतंक और हिंसा उसे गलाते जा रहे हैं । वह चुक रहा है/बाहर से ही नहीं अंदर से भी। सूख रहा है आदमी/बाहर से ही नहीं अंदर से भी। कहाँ है आदमी? कोई पता बताएगा? मैं खोज रहा हूँ आदमी, आदमी बनकर/ खोज रहा हूँ आदमी। पूरे होशो हवाश में। जिंदगी की सबसे बड़ी आश में/ आस्था में जीने के लिए/ दृढ़ प्रतिज्ञ। आदमी की खोज जारी रहेगी। कोई बताएगा उसका पता?। प्रश्नवाचक चिन्ह (?) आदमी अपनी खोज में, स्वयं को खोजता हुआ। स्वयं को भूल गया है। और इस भूल भुलैया में वह खण्डहर में तब्दील होता जा रहा है। ऐसा खौफनाक मंजर जिसे वह खुद नहीं समझना चाहता। खण्डहर में तब्दील होने का कोई कारण भी तो होगा? इस सवाल पर वह चुप लगा जाता है और अंदर ही अंदर टूटने लगता है, पूरी तरह। जिस बेहतर जिंदगी की आस में जीवन का स्वर्णिम समय गुजार देने के बाद जब उसे होश आता है, तब बहुत देर हो चुकी होती है। आज विश्व मानव के आगे सबसे बड़ी त्रासदी यही दिखती है। वह सब कुछ जानकर भी कुछ नहीं जानता और कुछ भी न जानकर सब कुछ जानने का दावा करता है। और इसी बिडम्बना में फँसकर वह लगातार चुकता जाता है– आत्महीनता और आत्मदीनता में उसकी इच्छाएँ और महत्वाकांक्षाएँ तबदील हो जाती हैं। जीवन क्या है? इस सवाल पर उसने कभी ध्यान ही नहीं दिया। उसने तो बस यही समझा हुआ था –अच्छा खाना, अच्छा पहनना, अच्छे मकान में रहना और सभी तरह की सुख–सुविधाओं के गुलाम होकर जिंदगी गुजार देना ही सबसे सफल और सबसे अच्छा जीवन है। लेकिन जब सवाल दर सवाल उसके सामने अंगद के पाँव की तरह जमाए खड़े हो जाते हैं तब ध्यान जाता है–अरे, अभी तक जैसा जीवन बिताया था, क्या वह सच्चा जीवन नहीं था? फिर वह क्या था? दोनों प्रश्नों से घिर जाने के बाद उसे अपनी समझ और बुद्धि पर बहुत क्रोध आया। जिस संस्कृति को वह सबसे बेहतर मानता था, वह सामान्य से भी गई बीती निकली। आखिर जीवन क्या है, उसे अच्छी तरह से कैसे जिया जा सकता है? अपने प्रश्न और उत्तर के द्वंद्व में वह इतनी बुरी तरह घिर चुका था कि शहद में फँसी मक्खी की तरह वह झटपटाने लगा। तभी उसे अचानक ध्यान आया–किसी ने कभी उससे कहा था–मित्र ध्यान रखना, जीवन जीने की कला सीखनी पड़ती है। दूसरों की जिंदगी जीने के ढंग को अपनाकर जिंदगी तो काटी जा सकती है लेकिन सजाई नहीं जा सकती। जीवन को सजाने के लिए मूल्य, सुकृत्य और सद्–व्यवहार के गुणनफल फल करने पड़ते हैं। जितने हल कर लिए वह हार कर भी जीत गया और जो हल नहीं कर पाया, वह जीत कर भी हार गया। यह हारना और जीतना हमारी अपनी धारणाओं, मान्यताओं और विचारों पर ही तो आधारित हैं, फिर सर्वोच्चता का भाव क्यों?

स्वयं से सच को छिपाना उतना ही असम्भव है जितना की श्वास के बिना जीवित रहना। अब वह स्वयं को समझने की बार–बार कोशिश कर रहा था। लेकिन जिसे भी समझना चाहता, वह प्रश्न बनकर खड़ा हो जाता। ऐसे प्रश्नों का उत्तर यदि स्वयं के पास न हो तो समझिए, अंदर से हम पूरी तरह चुक चुके हैं, हम अंदर से लगभग मर चुके हैं, हमारी स्थिति उसे मधु पिए मदमस्त हाथी की तरह हो चुकी होती है जो सबसे अधिक बलवान समझते हुए भी स्वयं से भयभीत रहता है। और भय में ही एक दिन इस भरे पूरे संसार से बिना बताए चुपचाप रुकसत हो जाता है।

भय से बढ़कर यदि कोई दयनीय स्थिति नहीं होती

तो आत्महीनता से बढ़कर कोई दीनता नहीं हो सकती। यह उस भिखारी से भी गया बीता है जो भीख मांगकर भी स्वयं को सबसे बड़ा स्वाभिमानी मानता है।

सामने उस खण्डहर को ध्यान से देखो। कितना उतावला हो रहा है अपनी मनोवृति पर। सबको यह बता देना चाहता है –आखिर उसकी ऐसी स्थिति क्यों है। वह खण्डहर में दबदील होने के पूर्व किस तरह आलीशान भवन के रूप में शहर के बीचोंबीच सीना तानकर खड़ा होकर अपनी भव्यता का प्रदर्शन करता था और सामने झोपड़ी को देखकर उसकी दीनता का मजाक उड़ाता था। कहते हैं, एक दिन शहर में भूकम्प आया। झोपड़ी का बाल बांका नहीं हुआ और वह सबसे पहले धराशायी हो गया। उस दिन से आज तक वह खण्डहर के रूप में ही खड़ा है। कोई न तो अब उसे नमस्कार करता है, न तो कोई उसकी भव्यता को नमन् करता है, न तो कोई उसकी दिव्यता को स्मरण करता है। हां, इतना जरूर लोग कहते सुने जाते हैं–कितना बड़ा भवन था, पिछले वर्ष के भूकम्प में शहर का कोई मकान नहीं गिरा लेकिन यह एक झटका भी बर्दाश्त न कर सका। और भरभराकर धराशायी हो गया। जरूर इसमें किसी के पाप का धन लगा होगा? जितने मुंह उतनी बातें।

चुके हुए आदमी और उस खण्डहर में कोई अंतर बता सकते हो? यदि अंदर से मजबूत होते तो एक झटके में भरभराकर गिर न जाते और अपनी भव्यता के गर्व में चकनाचूर न हो जाते। अंदर की एक कलात्मकता और भावात्मकता जब तक जीवंत रहती है अंदर का आदमी जिंदा रहता है–पूरे होशोहवास के साथ। और इतना तो जानते ही होगे कि अंदर से खोखला होने के बाद बाहर के रंग–रोगन से दूसरों को तो भ्रमित किया जा सकता है लेकिन स्वयं से छिपा पाना असम्भव ही होता है। असम्भव शब्द यदि सबसे अधिक कहीं उपयुक्त बैठता है तो ऐसे प्रसंगों में ही।

सच का सुख और झूठ का सुख को कभी एहसास किया है? एक जीवन बिम्ब के साथ सच के सुख को एहसास करके देखो– तुम कितने पूर्ण हो। और जब पूर्णता का बोध होने लगे तो समझ लेना तुम दूसरों को आधार प्रदान करने के काबिल बन चुके हो। एक सच्चा इंसान तुम्हारे अंदर निर्मित हो चुका है। लेकिन यदि झूठ के सच के सुख में ही स्वयं को डुबो दिया तो याद रखो, तुम बहुत जल्दी मरने वाले हो, अब तुम्हें मरने से कोई बचा नहीं सकता। यहाँ तक कि तुम्हारा ईश्वर भी ऐसे समय में तुम्हारा साथ निभाने के लिए तैयार नही होगा। झूठ से आदमी अंदर और बाहर से चुकता है, लेकिन चुकते वक्त उसे जो सुख मिलता है उसे ही वह असली सुख मानकर जीवन की पूर्णता समझने लगता है। जैसे स्त्री प्रसंग में स्खलन के समय जो सुख मिलता और उसके उपरान्त शरीर और मन की जो दशा होती है, कुछ इसी तरह का सुख। आदमी ऐसी स्थितियों में स्वयं पर अर्जित कर लिया है तो झूठ का सुख बालू की भीत की तरह एक दिन हमेशा के लिए विदा ले लेगा और यदि रंग–रोगन में ही अपनी पूर्णता मान लिया तो समझो अब मरने से तुम्हें कोई बचा नहीं सकता। जीवित रहने की छटपटाहट के बावजूद भी तुम्हारी जिजीविषा के संकल्प पत्र जीर्णशीर्ण हो गए। यह तुम्हारे अंदर से चुक जाने का परिणाम है। इस परिणाम को स्वीकार करो और फिर से एक नए जीवन के लिए संकल्पित हो जाओ। हां, ध्यान रखना तुम इस बार चुकना, टूटना नहीं और खण्डहर बनने का विचार तक कभी मन में न लाना। वरना, तुम्हारा नूतन जन्म भी उसी तरह व्यर्थ चला जाएगा जैसा की पिछला जन्म हुआ था।

योगी की समस्थिति

क्वचिद् भूमौ शय्या क्वचिदपि च पर्यङ्कशयनं,
क्वचिच्छाकाहारी क्वचिदपि च शाल्योदनरुचिः।
क्वचित्कन्थाधारी क्वचिदपि च दिव्याम्बरधरो,
मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्।।
(वैराग्यशतक)

अर्थः– योगी विभिन्न परिस्थितियों समान रहता है। मान–अपमान, लाभ–हानि, सुख–दुःख, जय–पराजय, सर्दी–गर्मी में एक स्थिति रहती है। वे कभी सुन्दर शय्याओं पर शयन करते हैं तो कभी भूमि पर ही सो जाते हैं। कभी अच्छे–अच्छे स्वादिष्ट पकवानों का आनन्द लेते हैं तो कभी शाक–पात खाकर ही निर्वाह कर लेते हैं। कभी सुन्दर वस्त्रों को धारण करते हैं तो कभी गुदडी से ही शरीर को ढक लेते हैं। विचारशील–विवेकी व्यक्ति अपने लक्ष्य की ओर ही दृष्टि रखे होते हैं, मार्ग में आने वाले सुख–दुःख की परवाह नहीं किया करते।

शोषण और क्रूरता से मुक्ति कब तक ?

– ✍ ए. के. सिंह

जब हम आप रात में खर्राटे भर रहे होते हैं तब मजलूम बच्चे किसी होटल, भट्टे या कारखाने में अपनी अट्ठारह–बीस घंटे की ड्यूटी कर रहे होते हैं। इसके बावजूद वे क्रूरता, हिंसा और यौन शोषण से बच नहीं पाते। आए दिन रेस्तराओं, होटलों और भट्ठों पर रात–दिन काम करने वाले बच्चों के साथ जानवरों से बद्दतर घटनाएं मीडिया की सुर्खियां बनती हैं, लेकिन ये सुर्खियां कभी शासन–प्रशासन के बहरे कानों या आंखों के लिए कोई संवेदना पैदा नहीं कर पातीं। यही वजह है, दुनिया में बच्चों पर होने वाले अत्याचार, हिंसा और क्रूरताएं लगातार बढ़ रही हैं। नये कानून बनते रहते हैं, लेकिन उन कानूनों का असर दिखाई नहीं देता है।

बच्चों और किशोरों पर होने वाले अत्याचार, हिंसा, अन्याय, क्रूरता और शोषण महज भारत की ही समस्या नहीं है, बल्कि दुनियाभर में बच्चों के साथ अन्याय, हिंसा, क्रूरता, प्रताड़ना और भेदभाव होता है। दुनिया के तमाम मुल्कों में बच्चों के शोषण के खिलाफ कानून बनाएं गए हैं। भारत में बाल शोषण, अन्याय और क्रूरता को रोकने के लिए कानून बनाए गए हैं। बालश्रम को गैर कानूनी घोषित करने वाला कानून 1986 में बनाया गया था, जिसे बाल श्रम प्रतिबंधित कानून कहा जाता है। यह कानून 14 साल की कम आयु के बच्चों से काम कराने पर रोक लगाता है, लेकिन कृषि क्षेत्र में काम कर रहे 14 साल से कम उम्र के बच्चों पर काम करने पर रोक नहीं लगाता। गौरतलब है दुनिया के 15 फीसदी बाल श्रमिक भारत में रहते हैं। जिस उम्र में बच्चों को भविष्य के अच्छे–अच्छे स्वप्न देखने चाहिए, उस उम्र में वे होटलों, कारखानों व घरों में अपना वर्तमान और भविष्य दांव पर लगा रहे होते हैं। 2019 में विश्व बाल मजदूर दिवस की थीम थी–बच्चों को खेतों में नहीं, बल्कि अपने सपनों पर काम करना चाहिए।' लेकिन क्या इस थीम पर दुनिया में कोई अमल हुआ? यदि हुआ है तो किस देश के बच्चों का स्वप्न खेतों से निकलकर उनके लक्ष्य शिक्षा–संस्कार निर्माण की ओर क्या साकार होने लगा है? और उस देश के मजलूम बच्चों को शोषण से छुटकारा मिल गया है और उनका अधिकार व स्वप्न उन्हें हकीकत में उनके पास वापस मिल गया है?

तमाम विकास की कवायदों के बीच आज भी बचपन कई स्तरों पर असुरक्षित है। बाल मजदूरी ही नहीं, इससे अधिक भयावह तस्वीर उन बच्चों की है जिस पर न के बराबर चर्चा होती है। देशभर में हर साल लाखों बच्चे गायब होते हैं या अपहरण कर लिए जाते हैं। उनमें से बमुश्किल से आधे बच्चे ही मिल पाते हैं, बाकी का कोई अता–पता नहीं लग पाता। गायब हुए बच्चे भी बाल श्रमिक व यौन कर्मी के रूप में कहां पर हैं, शासन–प्रशासन के पास कोई जानकारी नहीं होती है। और न्यायपालिका भी अपनी तरफ से कोई संज्ञान नहीं लेती। हांड़ कंपा देनी वाली ठंठ में गरीब मजलूम बच्चे ठंठ की वजह से हर साल हजारों की तादाद में अपनी जान गंवा देते है, लेकिन उनकी सुधि लेने वाला कोई नहीं। वे एनजीओ भी नहीं जो मजलूम बच्चों की सुरक्षा व शिक्षा के नाम पर लाखों रुपये देश–विदेश से पाते हैं।

बच्चे देश की भविष्य हैं, लेकिन जो बचपन मजबूर, मजलूम और शोषण का शिकार है, वह देश का धब्बेदार भविष्य ही माना जाएगा। इस धब्बेदार भविष्य की सुधि लेने वाला कोई नहीं है। क्या केंद्र सरकार इस तरफ गौर करेगी? क्या महज बाल श्रम, बाल शोषण, बाल हिंसा या बाल अपहरण के खिलाफ कानून बना देने से बचपन सुरक्षित हो जाएगा? सरकार के लिए यह उपेक्षित वर्ग आजतक महत्वपूर्ण क्यों नहीं बन पाया हैं? ऐसे तमाम सवाल हैं जिसका जवाब अभी आना बाकी है। आईएलओ के अनुसार कृषि क्षेत्र में सबसे अधिक बाल मजदूर कार्य करते हैं। इन बाल मजदूरों को दिहाड़ी वयस्क मजदूरों की अपेक्षा आधी मिलती है। कहने को यह परिवार की बदहाल हालात के कारण मजबूरी में खेतों में काम

करते हैं, लेकिन गरीब परिवारों में इनको एक कमाई करने वाला सदस्य के रूप में समझा व देखा जाता है। इसलिए इनके शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास के बारे में कोई ध्यान नहीं देता है। सरकार ऐसे मजलूम बच्चों के लिए इनकी मुफ्त में शिक्षा देने की बात करती है, लेकिन ये स्कूल जाने ही नहीं पाते हैं या तब जाते हैं, जब काम से इन्हें कभी–कभार छुट्टी मिलती है। पांच से चौदह साल के इन बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास के लिए जरूरी आहार नहीं मिलता और सेहतमंद बनें रहने के लिए जरूरी आराम की भी कोई व्यवस्था नहीं होती।

भारत में कृषि में काम करने वाले बाल मजदूरों की तादाद 60.67 प्रतिशत से अधिक है यानी देश की यह सबसे बड़ी समस्या है। इस समस्या के समाधान के लिए बच्चों को बाल मजदूरी से मुक्त कराने के लिए खेती में काम करने वाले मजदूरों को भी वहां से हटाना होगा। समस्या यह है, सरकार यदि कृषि क्षेत्र से बाल मजदूरों को हटाए तो उनके और उनके परिवार के लिए आहार, वस्त्र और दूसरी जरूरी चीजों का बंदोबस्त करने के लिए क्रांतिकारी ठोस कदम उठाने होंगे। जो अभी भारत जैसे विकासशील देश में सम्भव नहीं दिखाई देता है। इसी तरह कालीन बुनाई में लगे बाल मजदूरों को हटाने के बाद उनके जीवन–यापन और शिक्षा की मुकम्मल व्यवस्था आज तक नहीं हो पाई। भट्ठा मजदूरों की समस्या अपने आप में एक बहुत जटिल समस्या है ही। इस क्षेत्र में लाखों की तादाद में बाल मजदूर काम करते हैं। घरों में काम करने वाले बच्चे–जिसमें लड़के–लड़की दोनों शामिल हैं, लाखों की तादाद में हैं। कारखानों में काम करने वाले बच्चों के शोषण की अलग कहानी है। इसी तरह सबसे विकट बाल शोषण बच्चों के यौन शोषण के रूप में होता है। इसमें अधिकांश गायब हुए बच्चे होते हैं, जिनकी करुण कहानी अपनी अजब बयानी करती है।

सरकारी आंकड़े बताते हैं कि देश में 1.1 करोड़ बाल मजदूर हैं, लेकिन यह संख्या इससे तीन गुना अधिक हो सकती हैं, क्योंकि सरकार के पास उन्हीं बाल मजदूरों के बारे में आंकड़े हैं जो शासन में दर्ज हैं। यदि सरकार के आंकड़े को ही मान लिया जाए तो एक करोड़ से अधिक बाल मजदूरों का होना, यह बताता है कि देश का बचपन शोषित, असुरक्षित और अन्याय की चक्की में पिसने के लिए अभिशप्त है।

ऐसा नहीं है कि सरकारों ने बाल मजदूरों को विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए कोई कोशिश ही नहीं की है। सरकार ने कोशिशें की हैं और हजारों की संख्या में बाल मजदूरों को मुक्त भी कराया जा चुका है, लेकिन उन सभी बाल मजदूरों का पुनर्वास आज तक मुकम्मल नहीं हो पाया है। अभी भी लाखों की तादाद में बाल मजदूर शोषण और अन्याय की चक्की में पिस रहे हैं। लाखों जो बच्चे अपहृत या गायब होते हैं और लौटकर नहीं आते, उन बच्चों के बारे में सरकार को जानकारी आधी अधूरी होती है। जब तक शासन–प्रशासन के स्तर पर ऐसे बच्चों के बारे में पूरी जानकारी नहीं होगी तब तक, बच्चों के शोषण, अन्याय और प्रताड़ना का चक्र चलता रहेगा।

भारत में बाल मजदूरी और बचपन की सुरक्षा के नाम पर चलने वाले एनजीओ के कार्यों के बावजूद बाल शोषण का कलंक कायम है। इस कलंक को मिटाने के लिए जब तक आम आदमी बच्चों के प्रति संवेदनशील और कर्तव्यनिष्ठ नहीं बनता, तब तक, भारत के बचपन का भविष्य सुरक्षित होना नामुमकिन ही है।

अनादि पदार्थ – जो ईश्वर, जीव और सब जगत् का कारण हैं ये तीन पदार्थ स्वरूप से "अनादि" हैं ।

प्रवाह से अनादि पदार्थ – जो कार्य जगत्, जीव के कर्म और जो इनका संयोग – वियोग है ; ये तीन परम्परा से अनादि हैं।

अनादि का स्वरूप – जो न कभी उत्पन्न हुआ हो, जिसका कारण कोई भीन हो, जो सदा से स्वयं सिद्ध होके सदा वर्तमान रहे वह अनादि कहाता है।

– महर्षि दयानन्द सरस्वती

चमत्कारी पौधे सहजन से जुड़े हैं कई चमत्कार

– ✍ डॉ. युधिश्ठिर त्रिवेदी

स्वदेशी चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद का आधार औषधि–वनस्पतियां हैं। जिससे अनन्त काल से जनमानस शारीरिक, मानसिक, आत्मिक और प्राणिक शक्ति की बृद्धि के साथ–साथ निरोग रहने, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, गम्भीर और असाध्य रोगों को दूर करने जैसे कार्यों में प्रयोग करता चला आ रहा है। आयुर्वेद लाखों वर्षों से लोगों का 'परममित्र' बना हुआ है। पश्चिमी देशों से होमियोपैथी, ऐलोपैथी जैसी कुछ चिकित्सा पद्धतियां भारत आईं और रोगोपचार के लिए प्रयोग की जाने लगीं, लेकिन आज भी गाँव–गिरांव में दिनचर्या में ऐसे अनेक पौधों, फूलों, फलों, पत्तियों और जड़ों का प्रयोग जनमानस करता है जो कई तरह से उपयोगी हैं। कई वृक्ष, पेड़ और पौधे चमत्कारी कहे जाते हैं, क्योंकि इनके फूल, फल, पत्ती, डंठल और जड़ सभी अंग–प्रत्यंग बड़े काम के हैं। इन्हीं चमत्कारी पौधों में 'सहजन' भी एक है। सहजन धनी–निर्धन दोनों के उपयोग में आता है। कैसे बता रहे हैं प्रख्यात शिशुरोग विशेषज्ञ, समाजसेवी और लेखक डॉ. युधिष्ठिर त्रिवेदी।

– सम्पादक

पूरे भारत की सबसे बड़ी स्वास्थ्य समस्या कुपोषण है। कुपोषण अनेक बीमारियों की जननी है। युक्ताहार–विहार ही स्वास्थ्य की कुंजी है। अमेरिका और यूरोप के विकसित देशों में मोटापा तथा अफ्रीका एशिया में भुखमरी और कम वजन कुपोषण के प्रकार हैं। भारत में दोनों ही प्रकार के कुपोषण से बड़ी मात्रा में लोग पीड़ित हैं। बड़े शहरों के धनाढ्य परिवारों में जंकफूड तथा कम शारीरिक श्रम के कारण 20–30 प्रतिशत बच्चे मोटापा से ग्रस्त हैं वहीं झुग्गी झोपड़ी और गांवों में गरीबी से पर्याप्त पोषण नहीं मिलने से कम वजन व मेरासमस पाया जाता है। विटामिन डी. की कमी दोनों वर्गों में बहुलता से है। दोनों प्रकार के कुपोषण का एक सरल, सस्ता, स्थानीय स्तर उपलब्ध उपचार है सहजन का पौधा। इस पौधे के पत्ते, फूल और फल (फलिया) सभी खाये जाते हैं। अपने वागड क्षेत्र में तथा साथ के मालवा और गुजरात में बस्तियों में और जंगल में सभी जगह यह पेड़ पाया जाता है तथा सारे देश में महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा तमिलनाडु तक बहुतायत से मिलता है। तमिलनाडु और कर्नाटक में इसकी फलियां और नरम पत्तियां दाल में डालकर और सब्जी बनाकर चाव से खायी जाती है। फलियां साल में दो बार आती हैं। नर्म ताजी पत्तियां और फूल बिहार में पकौड़ी बनाकर तथा कढ़ी और दाल में डालकर खायी जाती हैं।

लगभग मुफ्त मिलने वाले इस पौधे की पत्तियों, फूल और फलियों में विटामिन, फालिक एसिड व बायोटीन तथा कैल्शियम कोपर लोरीन आईरन मेगनीज मोलीबीडनम फोसफोरस, पोटेशियम सोडियम सेलेनियम सल्फर, जिंक आदि लवण, आठ एसेंशीयल एमाइनोएसीड ल्युसीन आईसोल्युसीन लासीन मीथोईनीन ट्रिपटोफेन वेलीन आदि 46 प्रकार के एण्टी आक्सीडेन्ड्स व 36 प्रकार के एन्टी इनफ्लेमेटरी कम्पाउण्ड बहुतायत से मिलते हैं। ये सारे स्वास्थ्य के लिये आवश्यक गुणकारी पोषक तत्त्व और किसी एक पौधे में नहीं मिलते हैं। इन आवश्यक पोषक तत्त्वों के कारण इसके पौधे का उपयोग आयुर्वेद में तीन सौ से अधिक रोगों के उपचार में होता है।

पतझड़ में जब हरी पत्तियां नहीं होती तब सूखाई हुई पत्तियों को पीसकर चूर्ण के रूप में एक–दो चम्मच सुबह शाम पानी के साथ लिया जा सकता है। यानी आटे में मिलाकर रोटी पकायी जा सकती है। इसमें विटामिन सी–सन्तरे से सात गुना, विटामिन एक गाजर से चार गुना, कैल्शियम–दूध से चार गुना, पोटेशियम–केले से तीन गुना पाया जाता है।

अपने उच्च विटामिन और मिनरल्स के कारण यह सौन्दर्यवर्धक, केशवर्धक, वृद्धावस्था को रोकने में सहायक, ब्लड प्रेशर और मोटापा कम करने में सहायक है। एन्टी ईनफ्लेमेटरी तथा एन्टीऑक्सीडेन्ट्स की उपस्थिति के कारण जोड़ों के दर्द आरथ्राईटीस, स्पोंडीलाईटिस आदि सभी वात रोगों में उपयोगी है। गुर्दे, मूत्राशय तथा पित्ताशय की पथरी निकालने में यह

उपयोगी है। इसकी पत्तियों को पीसकर लगाने से घाव और सूजन ठीक हो जाते हैं। जोड़ों के भी दर्द में इसकी पत्तियां गर्म पानी में उबालकर नहाने के काम में ली जाती सकती हैं। इस प्रकार यह पौधा कुपोषण के बचाव व उपचार में बहुत उपयोगी है। इसका बोटेनीकल नाम मोरींगा ओलीफेरा है तथा हिन्दी में इसे सहजना सेजन व सुजना नाम से पुकारते हैं। वैसे चाहे किसी भी नाम से पुकारे गुलाब–गुलाब ही होता है।

इस प्रकार धनी–निर्धन हर किसी के उपयोग में आने वाला सहजन रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने वाला तो है ही, शरीर और मन दोनों को स्वस्थ और संतुलित रखने में अत्यन्त उपयोगी है। इसलिए इसे 'चमत्कारी पौधा सहजन' कहा जाता है।

मन का उपचार

– ✍ शकुंतला देवी

मन का मन के जरिए उपचार एक मनोवैज्ञानिक विधि है, लेकिन कई लोग इसे महत्व नहीं देते हैं। चिकित्सा की कई डिग्रियां लेने के बाद जब वे एक पागल का उपचार नहीं कर पाए, तो उन्हें बहुत लज्जा महसूस हुई। वे विचार करने लगे, वर्षों उन्होंने चिकित्सा की बड़ी–बड़ी उपाधियां हासिल कीं। हजारों लोगों की गम्भीर सी गम्भीर बीमारियों को ठीक किया, लेकिन वे एक मनोरोगी को ठीक नहीं कर पाए। वे सोचने लगे, चिंतन करने के बाद एक दिन उन्हें एक विचार आया–क्यों न मन की चिकित्सा मन के जरिए की जाए। लेकिन समस्या यह थी कि एक पागल के मन के जरिए उसके पागलपन की चिकित्सा करनी थी। उन्होंने पागल पर नज़र रखना शुरू किया। उन्होंने अनुभव किया कि पागल भी चौबीस घंटों में एक बार अच्छी दशा में आ जाता है, उस वक्त उससे बात की जा सकती है। हो सकता है उसको पागलपन से छुटकारा मिल जाए। अति कठिन कार्य होने के बावजूद उन्होंने उसे चुनौती के रूप में स्वीकार किया और एक दिन वे अपने कार्य में सफल हो गए। एक पागल जो कभी वैज्ञानिक था को सामान्य जिंदगी वापस मिल गई।

मनोवैज्ञानिकों के मुताबिक मन के जरिए मन का उपचार एक अत्यंत जटिल कार्य है, लेकिन असंभव नहीं। मन को सामान्य अवस्था और उसकी अन्य अवस्थाओं को यदि समझ लिया जाए तो, इंसान की ऐसी तमाम जटिलाएं दूर हो सकती हैं जो मन से पैदा होती हैं या मन को न समझने की वजह से होती हैं। सुश्रुत संहिता में मन पर गहराई से विचार किया गया है। मानस रोग हो या मानस कार्य सभी को सामान्य अवस्था से अलग हटकर समझा जा सकता है। आचार्य चाणक्य कहते हैं, मनस्वी होने के लिए मन पर काबू पाना जरूरी है। वेद में मनस पाप का परिणाम और उससे निवृति की चर्चा की गई है। मनस पाप मन के जरिए होता है। इसलिए मन के लिए वेद में शुभ संकल्प करने की बात कही गई है। और मन का संकल्प यदि शुभ के लिए हो जाए तो धीरे–धीरे मन के जरिए मानस रोगों का उपचार किया जा सकता है, लेकिन जिनका मन पर नियंत्रण ही नहीं है वे मनस पाप से नहीं बच सकते हैं। शुभ संकल्प के अभ्यास के जरिए मन को पवित्र बनाया जा सकता है–हमारी पूरी शक्ति और उद्देश्य इसके लिए दृढ़ होने जरूरी हैं।

कहानी

भाव ही नहीं, भंगिमा भी पहिचानिए

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात

– ✍ अखिलेश आर्येन्दु

गौर से उन्होंने घर पर आए अजनबी को देखा और बोल पड़े–''लगता है तुम मुझसे कुछ पैसे मांगने के लिए आए हो, लेकिन श्रीमानजी, बिना जान–पहचान के कुछ भी हाथ में रखना सम्भव नहीं....आप को मेरे पास किसने भेजा है?''अजनबी चेहरे का भाव बदलते हुए बोला, ''मैंने तो आप की तारीफ़ सुनी थी, सोचा इधर से गुजर रहा हूं, मिलता चलूँ।'' दोनों में देर तक तक बातें होती रहीं और अजनबी व्यक्ति के हाव–भाव बदलते रहे, लेकिन वह अपने उस भाव को छिपा नहीं सका, जो शुरू में उसके चेहरे पर दिखाई दिया था। कहते हैं, जौहरी हीरे की परख कर लेता है, उसी तरह से भाव–भंगिमा को परखने वाले हाव–भाव से व्यक्ति के चहरे का भाव परख लेते हैं।

भाव–भंगिमाएँ व्यक्ति के अन्दर और बाहर दोनों भावों को प्रकट करती हैं। कहा गया है, आप को मुख से बताने की जरूरत नहीं है, आप का चेहरा बता देता है कि आप के अन्दर और बाहर क्या चल रहा है। कहा यह भी जाता है कि विश्व में भरत मुनि द्वारा रचित 'नाट्य शास्त्र' हाव–भावों का वैज्ञानिक अध्ययन करने वाली पहली कृति है। संस्कृत साहित्य में गौरव ग्रंथ के रूप में प्रतिष्ठित इस ग्रंथ में 37 अध्याय है, जिनमें 6,000 श्लोक हैं। इस ग्रंथ में 215 मुद्राओं का वर्णन किया गया है, जो व्यक्ति की प्रत्येक मनःस्थिति को प्रकट करने वाली हैं। यह ग्रंथ इतना महत्वपूर्ण है कि सैकड़ों विदेशी विद्वानों ने इनमें वर्णित भाव–भंगिमाओं का अध्ययन करके मानव के मनोविज्ञान को समझने की कोशिश की।

हमारे हाव–भाव जहाँ हमारी अन्तर्स्थिति को प्रकट करते हैं वहीं पर संवेदनाओं को भी प्रकट करते हैं। मनोवैज्ञानिकों के मुताबिक हाव–भाव एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। आज यह ललित कलाओं, संगीत, शिल्प, योग, चित्रकला और कार्टून में इस्तेमाल किया जाता है। हमारे साथ और हमारे आस–पास जो भी कुछ घटित होता है, वह हमारी क्रियाओं की प्रतिक्रियाएँ हैं। हमारी क्रियाएँ सकारात्मक होती हैं तो प्रतिक्रियाएँ सकारात्मक होती हैं और नकारात्मक होती हैं तो प्रतिक्रियाएँ नकारात्मक होती हैं। और इनका असर मन, विचार, परिवार और वातावरण में उसी रूप में पड़ती है। इसी तरह अनुभूति की जितनी संवाहक भाव–भंगिमाएँ है, उतनी भाषा भी नहीं हैं, क्योंकि हम उतना बोलते नहीं जितना कि भाव–भंगिमाओं के जरिए प्रकट करते हैं। यानी भाव–भंगिमा की भाषा बोलने या लिखने वाली भाषा से कहीं ज्यादा असरदार है। जो भाव–भंगिमाओं की भाषा पढ़ने में माहिर होता है, वह बिना कुछ सुने या देखे ही स्थिति और व्यक्ति की पहचान कर लेता है। कहते हैं कविवर बिहारी भाव–भंगिमाओं के जौहरी थे। तभी तो उन्होंने यह दोहा लिख दिया, जो आज भी भाव–भंगिमाओं को समझाने की कोशिश कर रहा है –

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे भौन में करत हैं, नैनन ही सों बात।।

एक फिल्मी गाना है, जिसका भाव है...नैनों की बात मत करियो हुजूर। नैना मेरे बड़े सयाने हैं। और ये सयाने नयन सब कुछ बता देते हैं, लेकिन मुखड़े की भाव–भंगिमा की कहानी इससे अलग है। मनोवैज्ञानिकों के मुताबिक **अ**लग–अलग जगहों पर इक्ट्ठे लोगों की भाव–भंगिमाएं अलग–अलग होती हैं और हर भाव–भंगिमा के भाव अलग–अलग होते हैं। आप यदि चेहरे के पारखी हैं तो, सरारती और सयाने दोनों की परख कर लेंगे। गांव में हाव–भाव के बारे में अवधी में कहावत है...सोना परखे घड़ी–घड़ी, मनई परखे एक घड़ी। यानी इंसान की परख उसके हाव–भाव से एक ही बार में हो जाती है। कहते हैं, चेहरे पर जो दिखता है, वह उस व्यक्ति के अंदर की बात कह देता है। इसलिए चेहरा पहचानने वाले इंसान की पहचान जल्द कर लेते हैं। इसमें किसी डिग्री या प्रशिक्षण की जरूरत नहीं होती है।